आलोक

कक्षा 11 के लिए हिंदी साहित्य की द्वितीय पुस्तक

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

राजकीय विद्यालयों में निःशुल्क वितरण हेतु

प्रकाशक

राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर

संस्करण : 2016

© माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर
© राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर

मूल्य :

पेपर उपयोग : 80 जी.एस.एम. मैफलीथो पेपर आर.एस.टी.बी. वाटरमार्क

कवर पेपर : 220 जी.एस.एम. इण्डियन आर्ट कार्ड कवर पेपर

प्रकाशक : **राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल 2–2 ए, झालाना डूंगरी, जयपुर**

मुद्रक :

मुद्रण संख्या :

सर्वाधिकार सुरक्षित

- **प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रानिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।**

- **इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।**

- **इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।**

- **किसी भी प्रकार का कोई परिवर्तन केवल प्रकाशक द्वारा ही किया जा सकेगा।**

पाठ्य पुस्तक निर्माण समिति

पुस्तक – आलोक (कक्षा–11)

संयोजक :– डॉ. गजादान चारण, विभागाध्यक्ष– हिंदी
राजकीय बाँगड़ महाविद्यालय, डीडवाना

संकलनकर्ता :– 1. विजय कुमार साँखला, प्रधानाचार्य
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय,
हिंगोटिया–सवाई माधोपुर

2. श्रीमती प्रमिता अरोड़ा, प्रधानाचार्या
बालिका आदर्श विद्यामंदिर, बालोतरा

आभार

सम्पादक मंडल एवं माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर उन सभी लेखकों का आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त करता है जिनके अमूल्य सृजन एवं विचार इस पुस्तक में सम्मिलित किये गये हैं।

यद्यपि इस पुस्तक में मुद्रित समस्त सामग्री का स्वत्वाधिकार का ध्यान रखा गया है फिर भी यदि कुछ अंश रह गये हों तो यह सम्पादक मंडल इसके लिए खेद व्यक्त करता है। ऐसे स्वत्वाधिकारी से सूचित होने पर हमें प्रसन्नता होगी।

नि:शुल्क वितरण हेतु

दो शब्द

विद्यार्थी के लिए पाठ्यपुस्तक क्रमबद्ध अध्ययन, पुष्टीकरण, समीक्षा और आगामी अध्ययन का आधार होती है। विषय–वस्तु और शिक्षण–विधि की दृष्टि से विद्यालयीय पाठ्यपुस्तक का स्तर अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। पाठ्य पुस्तकों को कभी जड़ या महिमामंडित करने वाली नहीं बनने दी जानी चाहिए। पाठ्यपुस्तक आज भी शिक्षण–अधिगम–प्रक्रिया का एक अनिवार्य उपकरण बनी हुई है, जिसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते।

पिछले कुछ वर्षों में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान के पाठ्यक्रम में राजस्थान की भाषागत एवं सांस्कृतिक स्थितियों के प्रतिनिधित्व का अभाव महसूस किया जा रहा था। इसे दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार द्वारा कक्षा–9 से 12 तक के विद्यार्थियों के लिए माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर द्वारा अपना पाठ्यक्रम लागू करने का निर्णय लिया गया है। इसी के अनुरूप बोर्ड द्वारा शिक्षण सत्र 2016–17 से कक्षा–9 व 11 की पाठ्यपुस्तकें बोर्ड के द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर ही तैयार कराई गई हैं। आशा है कि ये पुस्तकें विद्यार्थियों में मौलिक सोच, चिंतन एवं अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करेंगी।

प्रो. बी.एल. चौधरी
अध्यक्ष
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

आमुख

शिक्षा का उद्‌देश्य विद्‌यार्थी के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षा के माध्यम से ही विद्‌यार्थी अपनी संपूर्ण अंतर्भूत शक्तियों का अधिकतम सदुपयोग करने की समझ एवं सामर्थ्य प्राप्त करता है। इसी माध्यम से जीवनमूल्यों एवं संस्कारों को समझने, स्वीकारने एवं अंगीकार करने का कार्य संभव होता है। शिक्षा वृहद संप्रत्यय है, जो कि सतत सीखने एवं सिखाने की प्रक्रिया का अहम आधार है। विद्‌यालय एवं महाविद्‌यालय स्तर पर कक्षा एवं संकायवार पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकें इस शिक्षा की वृहद प्रक्रिया की अहम कड़ी मानी जाती है। किशोरावस्था एवं युवावस्था के सांध्यस्थल वाले विद्‌यार्थियों के जीवन का यह समय बहुत उथल–पुथल वाला समय होता है। इस समयावधि में अभिभावकों तथा सामाजिकों की जिम्मेदारी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। यह अनुभवजनित सत्य है कि बनने एवं बिगड़ने में अत्यंत सूक्ष्म फासला है। इस उम्र में व्यक्ति अपने भविष्य के सुनहरे सपने संजोना शुरु कर देता है। वह अपने आसपास एवं परिचय–परिवेश का अवलोकन कर स्वयं के लिए कुछ आदर्श चुनने का प्रयास करने लगता है। यह भी प्रयोगसिद्‌ध सत्य है कि व्यक्ति को उपलब्ध विकल्पों में से ही सही की तलाश करनी होती है। वर्तमान समय में समाज की विद्रूपताएँ, विसंगतियाँ एवं नैतिक तथा चारित्रिक पतन की अनेक घटनाएँ प्रतिदिन किसी न किसी माध्यम से सामाजिकों के सामने आती है। चूंकि विद्‌यार्थी भी उसी समाज का हिस्सा है अतः वह भी इनसे न्यूनाधिक प्रभावित होता ही है। ऐसे में विद्‌यार्थियों के सामने सही विकल्प रखना समाज का परम दायित्व बनता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए कक्षा ग्यारहवीं के विद्‌यार्थियों के सामने राष्ट्रीय चरित्रों का विकल्प प्रस्तुत करने का अल्प किंतु सद्‌प्रयास इस पुस्तक में किया गया है।

'सत्य परेशान तो हो सकता है लेकिन परास्त नहीं हो सकता' इस चिरंतन सत्य को विद्‌यार्थियों के समक्ष प्रबलता से रखना तथा हर विद्‌यार्थी के मन में भारतीय जीवनमूल्यों के प्रति गहरी आस्था के भाव भरना हमारा उद्‌देश्य रहा है। द्रुतपाठ की इस पुस्तक में भारतीय इतिहास के उन आदर्श चरित्रों को सम्मिलित किया गया है, जिनको लोक ने अपनी पलकों पर बिठाया है तथा जिनके प्रति लोगों में अपार सम्मान एवं श्रद्‌धा का भाव है। ऐसे राष्ट्रीय चरित्रों में मातृभूमि के सुभट संरक्षक प्रणधारी महाराणा प्रताप, शौर्य की साक्षात प्रतिमूर्ति रानी लक्ष्मीबाई तथा आजादी के अमरनायक ठा. केसरीसिंह बारहठ जैसे महानायकों की जीवनियाँ इस पुस्तक में साभार संकलित की गई हैं। इसके साथ ही राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी से संबंधित एक संस्मरण शामिल किया गया है वहीं भारतीय संविधान निर्माताओं में से एक महत्त्वपूर्ण नायक डॉ. भीमराव अम्बेडकर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को उजागर करने वाला एक आलेख लिया गया है।

साहित्य संचेतना तथा संवेदना का सतत वाहक होता है। साहित्य के काम की तुलना कैमरे से की गई है। कैमरा वैसा ही चित्र खींचता है, जैसा चेहरा होता है। उसी प्रकार साहित्यकार भी समाज के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष चित्र खींचने का काम करता है। लेकिन साहित्य का काम चित्रकारी से आगे भी है और वह है वर्तमान की विद्रूप छवि के कारण एवं निवारण को इंगित करना। इस दृष्टि से हिंदी साहित्य

के इन विद्‌यार्थियों में चीजों एवं घटनाओं को सही संदर्भ में जानने की समझ विकसित करने हेतु इस पुस्तक में एक एकांकी 'पृथ्वीराज की आँखें' तथा एक रिपोर्ताज 'मुक्ति योद्धाओं के शिविर में' रखे गए हैं। दोनों ही पाठ अपनी–अपनी विधा के चुनिंदा पाठ हैं, जिनसे विद्‌यार्थियों में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय घटनाओं को सही संदर्भ में समझने की समझ विकसित होगी।

पाठ्‌यसामग्री संकलन में यह ध्यान रखा गया है कि हिंदी साहित्य की समृद्ध संपदा के राष्ट्रीय फलक से विद्‌यार्थियों को परिचित करवाते समय राजस्थान के आदर्श नायकों तथा रचनाकारों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व भी विद्‌यार्थियों के समक्ष आए ताकि हमारे विद्‌यार्थी हिंदी की मुख्यधारा में राजस्थान के योगदान को रेखांकित करने में समर्थ बनें। छोटे कलेवर वाली इस पुस्तक में संकलित सामग्री एक संकेत मात्र है, जिसके माध्यम से विद्‌यार्थी इस दिशा में सोचना तथा इस राह पर अग्रसर होना शुरु करें, तभी हमारा उद्‌देश्य पूर्ण होगा।

निर्धारित पाठ्‌यक्रमानुसार पुस्तक के संपादन का गुरुत्तर दायित्व प्रदान करने हेतु माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर का आभार। यद्‌यपि इस पुस्तक में मानक हिंदी का अनुसरण किया गया है तथापि कहीं–कहीं पाठ की मूल भावना को ध्यान में रखते हुए पुरानी वर्णमाला का प्रयोग किया गया है। कृतज्ञता उन लेखकों एवं प्रकाशकों के प्रति, जिनके ग्रंथों से सामग्री साभार ली गई है। संपादक–मंडल ने अपनी पूर्ण चेतना से राष्ट्र के भावी कर्णधारों के व्यक्तित्व विकास हेतु अपेक्षित साहित्यिक सामग्री संकलित–संपादित करने का सद्‌प्रयास किया है। इसका मूल्यांकन तो सुधीजन, शिक्षकगण और भाषा एवं साहित्य के मनीषी विद्वान ही कर सकेंगे। अस्तु!

डॉ. गजादान चारण
संयोजक

अनुक्रमणिका

आमुख

विधा, रचना एवं रचनाकार

1.	स्वातंत्र्य–उपासक महाराणा प्रताप (जीवनी) संकलित	6
2.	रानी लक्ष्मीबाई (जीवनी) संकलित	15
3.	राष्ट्रमंदिर का सुवासित पुष्प केसरीसिंह बारहठ (जीवनी) – डॉ. रामचरण महेन्द्र	21
4.	गाँधीजी (संस्मरण) – बनारसीदास चतुर्वेदी	26
5.	विष पिया अमृत दिया (निबंध) – हितेश शंकर	32
6.	पृथ्वीराज की आँखें (एकांकी) – डॉ. रामकुमार वर्मा	38
7.	मुक्तियोद्धाओं के शिविर में (रिपोर्ताज) – विष्णुकांत शास्त्री	46

नि:शुल्क वितरण हेतु

पुस्तक में संकलित विधा, रचना एवं रचनाकार

साहित्य के भेद–प्रभेदों की दृष्टि से विविध विषयी विचार–विमर्शोपरांत मनीषियों ने बड़े तौर पर साहित्य के दो भेद माने हैं– पद्य एवं गद्य। हिंदी साहित्येतिहास के आदिकाल एवं मध्यकाल में पद्य अथवा काव्य का बोलबाला रहा। इन कालों में काव्य के अनेक रूपों यथा प्रबंधकाव्य, खंडकाव्य, मुक्तक काव्य आदि का प्रचुर मात्रा में सृजन हुआ। यद्यपि इनके साथ–साथ कहीं–कहीं गद्य रचनाओं के भी उदाहरण मिलते हैं लेकिन सही अर्थों में हिंदी गद्य का उद्भव एवं विकास आधुनिक काल की ही देन है। भारतेंदु युग से आज तक की कहानी हिंदी गद्य के इतिहास की कहानी है। आज हिंदी गद्य ने इतना विकास कर लिया है कि वह विश्व की किसी भी भाषा के गद्य के समक्ष बौना नहीं लगता। कई शताब्दियों से विकसित पश्चिम के गद्य से इसकी तुलना अभी उचित नहीं है परन्तु आशा है निकट भविष्य में यह संसार के श्रेष्ठतम गद्य के साथ स्पद्र्धा करने योग्य हो जाएगा। भारतेंदु काल हिंदी गद्य का उत्कर्ष काल है तो द्विवेदी काल इसके परिमार्जन एवं सुधार का काल माना जाता है। इस काल में हिंदी गद्य का पर्याप्त परिष्कार हुआ तथा अनेक प्रकार की गद्य विधाओं का विकास हुआ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विभिन्न विकसित राष्ट्रों के साथ विविध आयामी संपर्कों के बढ़ने से हिंदी साहित्य में नए–नए तत्त्व एवं तथ्य प्रविष्ट हुए। इससे गद्यशैली एवं गद्य विधाओं का तीव्रता के साथ विकास हुआ। अंग्रेजी के साथ अन्य भाषाओं के साहित्य से हमारा परिचय हुआ, नगरीकरण, औद्योगीकरण, बदलती व्यवस्थाओं तथा मानदंडों को जानने–समझने के लिए साहित्य के अत्याधुनिक रूपों का विकास हुआ है। एक समय में आलोचकों द्वारा हाशिये पर रखी जाने वाली विधाएँ मुख्य आसन पर आ बैठीं। समय के बदलाव के साथ आर्थिक भागमभाग के दौर में प्रबंधात्मक एवं दीर्घ कलेवर वाली रचनाएँ पढ़ने का समय लोगों के पास नहीं रहा, ऐसे में छोटे कलेवर की सरस, सरल एवं सपाट अभिव्यक्ति वाली विधाएँ मुखर हुईं।

हिंदी गद्य की विविध विधाओं की बात करें तो कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र, निबंध, रिपोर्ताज, डायरी, पत्र, गद्यकाव्य, रेडियो–रूपक, भाषण, साक्षात्कार एवं व्यंग्य आदि रूपों में आज गद्य हमारे सामने है। हिंदी गद्य के इन विविध रूपों में से इस संकलन में जीवनी, संस्मरण, एकांकी, रिपोर्ताज तथा निबंध कुल पाँच विधाओं को शामिल किया गया है। पद्य एवं गद्य के सभी रूपों से विद्यार्थी पाठ्यक्रम के साथ–साथ सुपरिचित होते रहेंगे। इस तथ्य को ध्यान में रख कर अत्यधिक विस्तार से बचते हुए यहाँ इन्हीं पाँच विधाओं का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है–

जीवनी – किसी व्यक्ति विशेष के जीवन–वृत्तति को जीवनी एवं आत्मकथा कहा जाता है। जब व्यक्ति स्वयं अपने विषय में लिखता है तो वह आत्मकथा हो जाती है तथा जब किसी अन्य के जीवन पर लिखा जाता है तो उसे जीवनी कहा जाता है। जीवनी को जीवन–चरित एवं जीवन–चरित्र नामों से भी जाना जाता है। अंग्रेजी में इसे 'लाइफ' अथवा 'बायोग्राफी' कहा जाता है। जीवनी में किसी व्यक्ति के आंतरिक एवं बाह्य दोनों विशिष्टताओं का लेखाजोखा होता है। सामान्यतया जीवनी में मुख्यपात्र नायक अथवा नायिका द्वारा संपूर्ण जीवन में किए गए कार्यों का वर्णन होता है लेकिन इस नियम की कड़ाई से पालना हर जगह संभव नहीं है। इसका कारण यह है कि जीवनी तो जीवित लोगों की भी लिखी जाती है, ऐसे में उनके जीवन की संपूर्ण घटनाएँ उसमें वर्णित किया जाना संभव नहीं हो पाता है। इस संकलन में महाराणा प्रताप, रानी लक्ष्मीबाई एवं ठा. केसरीसिंह बारहठ की जीवनियों के संक्षिप्त किंतु महत्त्वपूर्ण अंश समाविष्ट कर स्वाधीनता के अमर नायकों की राष्ट्र के चरणों में समर्पित आहूतियों का सम्मान किया गया है। इनके अनुकरणीय चरित्र को आदर्श मानकर आज का विद्यार्थी अपने मन में राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता के प्रति श्रद्धा एवं सम्मान के भाव जगा सकेगा। साथ ही युवाओं में उचित कार्य करने हेतु वांछित दृढ़ इच्छाशक्ति का विकास करने हेतु इन चरित्रनायकों का जीवन प्रेरणास्पद होगा।

संस्मरण – स्मृति के आधार पर किसी व्यक्ति या विषय के संबंध में लिखित लेख या ग्रंथ को संस्मरण कहा जाता है। इसमें किसी व्यक्ति, स्थान या विषय–विशेष की विशेषताओं को इस ढंग से प्रस्तुत किया जाता है कि वह अपने आप में एक इकाई बन जाता है। व्यापक रूप में तो संस्मरण आत्मचरित या आत्मकथा के अंतर्गत ही आता है किंतु इनके दृष्टिकोण में मौलिक अंतर है। आत्मकथाकार का मुख्य उद्देश्य अपनी जीवनकथा का वर्णन करना होता है। उसमें कथा का प्रमुख पात्र लेखक स्वयं होता है। इतिहास की अन्य घटनाओं और परिस्थितियों का केवल वही रूप आत्मकथा में आता है, जो लेखक के जीवनक्रम को प्रभावित, संचालित या नियंत्रित करता है। इसके विपरीत संस्मरण लेखक अपने समय के इतिहास को लिखना चाहता है। परन्तु वह इतिहासकार के वस्तुपरक रूप से बिल्कुल अलग रहता है। संस्मरण लेखन व्यक्ति या स्थान के गहन संपर्क एवं परिचय के आधार पर ही संभव हो पाता है। संस्मरण के मूल में अतीत की स्मृतियाँ होती हैं जो कि व्यक्तिगत गहन संपर्क का ही परिणाम होती हैं। संस्मरण में लेखक महत्त्वपूर्ण से महत्त्वपूर्ण एवं छोटी से छोटी सभी प्रकार की बातों का सूक्ष्म अंकन करता है। संस्मरण ऐसी विधा है जो रेखाचित्र से मिलती–जुलती है किंतु अपने निजी जीवन के स्पर्श के कारण सरसता लिए रहती है। रेखाचित्र में कल्पना का भी यथेष्ट पुट रहता है लेकिन संस्मरण में वास्तविक जगत के व्यक्ति के साथ संबंधों को स्मृति के पटल पर उभारकर साहित्यिक शैली में प्रस्तुत किया जाता है। इस संकलन में बनारसीदास चतुर्वेदी लिखित 'गाँधीजी' नामक संस्मरण शामिल कर विद्यार्थियों के समक्ष राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के महान जीवनादर्शों के साथ–साथ हास–परिहास एवं व्यंग्य–विनोद के कुछ विशिष्ट प्रसंगों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है, जिनसे हमारी युवाशक्ति आत्मानुशासित होने की प्रेरणा ले सकेगी। साथ ही यह जान सकेगी कि जीवन में कितनी ही व्यस्तता एवं गुरुत्तर जिम्मेदारियाँ क्यों ना हो उनके बीच भी अनुशासन, मूल्यरक्षा तथा हास्य विनोद के लिए स्थान रखा जा सकता है। महात्मा गाँधी इतने व्यस्त होने के बावजूद हास्य–विनोद को बराबर महत्त्व देते थे, तो हमें भी इस प्रवृत्ति के समुचित उपयोग के साथ जीवन को सरस बनाए रखना चाहिए।

एकांकी – एकांकी नाटक का ही एक रूप है। यह नाटक साहित्य का वह नाट्य प्रधान रूप है जिसके माध्यम से मानव जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य अथवा एक भाव की

कलात्मक व्यंजना की जाती है। भारतवर्ष में नाटक की परंपरा बहुत प्राचीन है। यहाँ'काव्येषु नाटकं रम्यम्' कहकर नाटक की महत्ता स्वीकार की गई है तो नाटक विधा को 'पंचम वेद' कहकर मान दिया गया है। हिंदी एकांकी इस नाटक विधा का अंग होते हुए भी आज जिस रूप में विकसित हुई है वह पश्चिम के 'वन एक्ट प्ले' से प्रभावित है। नाटक एवं एकांकी में वही अंतर है जो उपन्यास एवं कहानी में है। कथावस्तु, पात्र–विधान, संवाद तथा रंग–संकेत इसके प्रमुख तत्त्व हैं। एकांकी में स्थान, काल तथा कार्य के संकलन का निर्वाह आवश्यक माना जाता है। मानव की असंख्य अभिरुचियों के अनुसार एकांकी के विषय भी अनेक होते हैं। डॉ. रामकुमार वर्मा ने आधुनिक एकांकी को 'जीवन के किसी अंग की संक्षिप्त किंतु चुभती हुई समीक्षा' मानते हुए लिखा है कि एकांकी में ''एक ही घटना होती है और वह घटना नाटकीय कौशल से ही कौतूहल का संचय करते हुए चरम सीमा तक पहुँचती है। उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं रहता। एक–एक शब्द और एक–एक वाक्य प्राण की तरह आवश्यक रहते हैं। पात्र चार या पाँच ही होते हैं, जो कि नाटकीय घटनाओं से पूर्णतया संबद्ध होते हैं।'' सारांश रूप में एकांकी एक लघु नाट्य रूप है जिसमें एक ही अंक होता है, पात्रों की संख्या सीमित होती है और उसमें एक घटना, एक संवेदना तथा एक परिस्थिति इस प्रकार नियोजित होती है कि दर्शक या पाठक पर उसका गहरा प्रभाव पड़ता है।

इस संकलन में डॉ. रामकुमार वर्मा विरचित 'पृथ्वीराज की आँखें' नामक एकांकी ली गई है। हिंदी के प्रतिष्ठित आलोचक एवं एकांकीकार डॉ. रामकुमार वर्मा हिंदी एकांकी के जनक माने जाते हैं। वर्मा जी ने सामाजिक, राजनैतिक आदि सभी प्रकार की एकांकियाँ लिखीं, किन्तु उन्हें सर्वाधिक सफलता एवं यश ऐतिहासिक एकांकियों के कारण ही मिला। ऐतिहासिक वातावरण के मध्य मानवीय मनोभावों एवं मानसिक द्वंद्वों के कलात्मक उद्घाटन में आप सिद्धहस्त हैं। संकलनत्रय का पालन आपकी एकांकियों को रोचक एवं लोकप्रिय बनाता है। आपकी प्रमुख एकांकियां हैं–दीपदान, रेशमी टाई, सप्तकिरण चारुमित्रा, ऋतुराज, पृथ्वीराज की आँखें आदि। आपका पहला एकांकी 'बादल की मृत्यु' था।

'पृथ्वीराज की आँखें' डॉ. रामकुमार वर्मा की भावना–प्रधान ऐतिहासिक एकांकी है। इसकी कथावस्तु महाकवि चंदबरदाई द्वारा रचित 'पृथ्वीराजरासो' महाकाव्य के छियासठवें व सड़सठवें 'समयों' पर आधारित हैं। जिन्हें क्रमशः 'बड़ी लडाई समय' एवं 'बाणवेध समय' के रूप में जाना जाता है। माना जाता है कि तराइन के प्रथम युद्ध में पृथ्वीराज चौहान के पराक्रम से पराभूत होकर शहाबुद्दीन उर्फ मुहम्मद गोरी युद्ध से पीठ दिखाकर भागा था किन्तु उसी तराइन के द्वितीय युद्ध में विजय के बाद मुहम्मद गोरी ने महाराज पृथ्वीराज को बंदी बना लिया। बन्दीगृह में उनकी आँखों में जलती सलाखें डालकर उन्हें अमानवीय यन्त्रणाएँ दी गईं। महाराजा पृथ्वीराज का विश्वासपात्र मित्र एवं कवि चंदबरदाई बंदीगृह में उनसे मिलने जाता है और वहाँ की अमानवीयता से आहत होता है। मौका पाकर चंदबरदाई पृथ्वीराज के शब्दवेधी बाण की प्रशंसा गोरी के सामने करता है और गोरी उस अद्भुत चमत्कार को देखने के लिए तैयार हो जाता है। पृथ्वीराज रासो के वर्णनानुसार पृथ्वीराज के शब्दवेधी बाण से अन्ततः गोरी मारा जाता है। पृथ्वीराज रासो का यह वर्णन इतिहास सिद्ध नहीं है किन्तु इसमें पृथ्वीराज की वीरता, कुशलता और चंदबरदाई की बुद्धिमता का प्रमाण मिलता है। मुहम्मद गोरी की क्रूरता का तो यह साक्षात् चित्र खींचता है, साथ ही हममें यह भावना भी भरता है कि पृथ्वीराज में जितनी वीरता और साहस था उतनी कूटनीतिज्ञता नहीं थी। उनकी अत्यधिक मानवता एवं दयालुता ने ही गोरी को पहले युद्ध में माफ किया। जबकि गोरी ने उन्हें अमानवीय यातनाएँ दीं, इस तथ्य से परिचित होकर हम अपने उस राष्ट्र–नायक

पृथ्वीराज के प्रति आदर एवं गौरव की भावना से भर उठते हैं तथा उनको दी गई यंत्रणाओं के कारण हमारे मन में क्षोभ होता है।

इस एकांकी में रचनाकार ने घटनाओं के वर्णन की अपेक्षा बंदी भारत–सम्राट पृथ्वीराज की मनःस्थिति के चित्रण पर विशेष ध्यान दिया है। क्षमा–दान को जीवन–मूल्य मानने वाले पृथ्वीराज पर गोरी के द्वारा किए गए निर्मम अत्याचारों का कितना मर्मांतक प्रभाव पड़ा होगा, यह हम विचार कर सकते हैं। इसका अत्यंत भावपूर्ण एवं मर्मस्पर्शी प्रभाव वर्णन हमें इस एकांकी में मिलता है। इस असहाय स्थिति में भी उस सिंहपुरुष ने जिस धैर्य, साहस, सहिष्णुता, स्वाभिमान एवं कौशल का परिचय दिया वह अतुलनीय एवं अद्भुत है। इतिहासकारों ने इस घटना का कहीं भी उल्लेख नहीं किया है इसी कारण इसे इतिहास सम्मत नहीं माना जाता है किन्तु भारतीय जनमानस में किंवदंती रूप में यह अत्यंत मर्मस्पर्शी घटना के रूप में जानी जाती है। एकांकी के संवाद पात्रों की मनोभावना एवं चारित्रिक विशेषताओं को भलीभाँति प्रकट करते हैं। संकलन–त्रय के नियम का कठोरता से पालन किए जाने से यह एकांकी अभिनेय एवं सफल एकांकी है।

रिपोर्ताज – रिपोर्ताज शब्द मूलतः फ्रेंच भाषा का है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग द्वितीय महायुद्ध के दौरान हुआ। सामान्यतः किसी घटना को उसके वास्तविक स्वरूप में वर्णित करना 'रिपोर्ट' कहलाती है लेकिन साहित्यिक जगत में उसी घटना को साहित्यिक सरसता एवं कलात्मकता के साथ प्रस्तुत करने पर वह 'रिपोर्ट' 'रिपोर्ताज' बन जाती है। पत्रकारिता जगत के लिए यह रोचक पत्रकारिता का अंग है। वर्तमान में अनेक पत्रकार इस ओर अग्रसर होते दिखते हैं। समाचारपत्रों के लिए लिखी गई रिपोर्ट की तरह यह भी तथ्यपरक, तात्कालिक एवं वस्तुनिष्ठ साहित्यिक विधा है। इसके लिए सतत अभ्यास, समृद्ध शब्द संपदा, भाषिक दक्षता एवं सूक्ष्म अवलोकन दृष्टि के साथ स्थानीय परिस्थितियों का समीचीन ज्ञान होना आवश्यक है। रिपोर्ताज बिना किसी पूर्व तैयारी के आशु कविता की तरह तत्काल लिखी जाती है। इसमें कल्पना एवं अलंकरण के लिए अधिक अवकाश नहीं रहता। इसमें लेखक तथ्यों एवं तथ्यों के प्रति सामूहिक प्रतिक्रियाओं को रोचक, कलात्मक एवं साहित्यिक रूप में प्रस्तुत करता है। हिंदी में यह विधा आधुनिकतम विधाओं में से है अतः यह विकासोन्मुख अवस्था में है। द्वितीय विश्वयुद्ध, बंगाल का दुर्भिक्ष, आजाद हिंद फौज का निर्माण आदि से हिंदी में इस विधा का प्रादुर्भाव एवं विकास हुआ। इस संकलन में विष्णुकांत शास्त्री द्वारा लिखित 'मुक्ति योद्धाओं के शिविर में' नामक रिपोर्ताज रखा गया है, जिसमें बांग्लादेश के मुक्तिसंग्राम की कहानी है। श्री शास्त्री ने स्वयं उन शिविरों में जाकर उन मुक्ति योद्धाओं के जीवन की कठिनाइयों, संघर्ष एवं आजादी के प्रति अनुराग को देखा, समझा तथा महसूस किया। स्वतंत्रता के प्रति व्यक्ति की चाहत एवं इस हेतु किए जाने वाले प्रयासों की दृष्टि से यह रिपोर्ताज अत्यंत प्रेरक है। विद्यार्थी इसे पढ़कर अपनी मातृभूमि एवं उसके प्रति अपने दायित्व को समझ सकेंगे।

निबंध – मूलतः 'निबंध' संस्कृत भाषा का शब्द है। यह 'नि' तथा 'बंध' के योग से बना है। संस्कृत में निबंध शब्द को कई अलग–अलग अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है, जिनमें से एक अर्थ 'बाँधने की क्रिया' भी है। 'नि' तथा 'बंध' को अलग अलग देखें तो 'नि' का अर्थ विशेष रूप से तथा 'बंध' का अर्थ बंधन से है। इस दृष्टि से भावों का समग्र बंधन या शब्दों का खास गुंफन निबंध कहलाता है। हिंदी में इसके पर्याय के रूप में प्रबंध, लेख एवं प्रस्ताव आदि शब्द प्रचलित हैं। वास्तव में निबंध उस गद्य रचना को कहा जाता है जिसमें लेखक निर्वैयक्तिक ढंग से किसी विषय पर प्रकाश डालता है।

वास्तविक रूप में निबंध बंधनयुक्त नहीं वरन खास गुंफनयुक्त रचना है। इसमें लेखक आलोच्य विषय के आस–पास समग्र दृष्टि से विचार करते हुए सम्यक लेखन करता है। हिंदी में निबंध विधा आधुनिक काल की देन है। आज निबंध विधा अत्यंत प्रचलित विधा है। इस संकलन में डॉ. भीमराव अंबेडकर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को सम्यक रूप से उद्घाटित करने वाला निबंध 'विष पिया, अमृत दिया' नाम से शामिल किया गया है। निबंधकार हितेश शंकर डॉ. अम्बेडकर के योगदान को सही एवं सकारात्मक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर उनके सटीक मूल्यांकन की पृष्ठभूमि तैयार करते हैं। विद्यार्थी इस आलेख से डॉ. अम्बेडकर एवं भारतीय संविधान निर्माताओं की भावना के साथ–साथ तथ्यों के पीछे छिपे सच को पहचानने की समझ विकसित कर पाएँगे।

अध्याय–1
स्वातंत्र्य उपासक महाराणा प्रताप
(संकलित)

अनूठी आन, बान एवं शान वाला यह राजस्थान प्रांत शक्ति, भक्ति एवं अनुरक्ति की त्रिवेणी माना जाता है। यहाँ का इतिहास शौर्य एवं औदार्य के लिए विश्वविख्यात रहा है। यहाँ जान से बढ़कर आन तथा प्राण से बढ़कर प्रण की शाश्वत परम्परा रही है। राजस्थान की इस तपोभूमि की कुछ ऐसी विशेषताएँ रही हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ है। यहाँ के वीरों ने धरती, धर्म, स्त्री एवं असहायों की रक्षार्थ मरने को मंगल माना; यहाँ की वीरांगनाओं ने अपनी कंचन जैसी काया का मोह त्यागते हुए अपने हाथों अपना सीस काट कर वीर पतियों को प्रणपालन का अद्‌वितीय पाठ पढ़ाया; यहाँ के संतों ने जन–जन की जड़ता को दूर करते हुए मानवधर्म की अलख जगाई; यहाँ के साहित्यसेवकों ने राजा से रंक तक सभी को कर्त्तव्यपथ पर अडिग डग भरने की सुभट सीख दी। जीवन से अत्यधिक मोह होते हुए भी काम पड़ने पर मरने से मुँह नहीं मोड़ कर सिंधुराग पर रीझते उन वीरों की मरदानगी की मरोड़ देखते ही बनती है। दुनिया में दूसरी जगह शायद ही ऐसा उदाहरण हो जहाँ वचन प्रतिपालन हेतु विवाह के 'कांकण डोरड़े' खोले बिना ही दूल्हे ने चंवरी में 'राजकंवरी' को छोड़कर 'भंवरी' की पीठ पर सवार हो युद्‌धभूमि की ओर प्रस्थान किया हो। धरती तथा धर्म की रक्षार्थ शूरवीर, शस्त्रों की तीक्ष्ण धार से कटते–काटते हुए रक्त से स्नान करते थे, उसे राजस्थानी साहित्य में धारा–स्नान कहा जाता है। ऐसे अनेक धारा–स्नानों की साक्षी यह राजस्थान की धोरा धरती धारा–तीर्थ की प्राचीन धाम मानी जाती है। इस वीर–वसुंधरा की उज्ज्वल रज अपने गौरवमय इतिहास के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ की रम्य रज जहाँ गर्मी में अत्यधिक तप्त होकर आग उगलती है वहीं चाँदनी रात में शीतल, कोमल एवं रमणीय हो कर अमृत बरसाती है। धरती की मूल तासीर ही उसके सपूतों में आती है और यही तासीर इस भूमि को विश्वविश्रुत बनाती है।

यूँ तो वीरभूमि राजस्थान का एक–एक अंग वीरत्व के अनगिन उदाहरणों का साक्षी है पर उसका मेवाड़ क्षेत्र तो अपनी वीरता, धीरता, मातृभूमि–प्रेम, शरणागत वत्सलता एवं अडिगता में अपना कोई सानी नहीं रखता। बप्पारावल, पद्‌मिनी, मीराँबाई, महाराणा हम्मीर, महाराणा कुम्भा, महाराणा सांगा, महाराणा प्रताप, महाराणा राजसिंह, हाड़ी रानी तथा पन्नाधाय जैसे अनेक महनीय नाम इस पावन धरा से जुड़े

हैं, जिनके तेजस्वी जीवन ने समाज को प्रेरणा दी। महाराणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज का विवाह भक्त शिरोमणि मीराँबाई के साथ हुआ था तथा सांगा के महारानी कर्मवती से दो छोटे पुत्र कुँवर विक्रमादित्य एवं उदयसिंह थे। दासी पुत्र बनवीर ने विक्रमादित्य की हत्या कर दी। अब वह उदयसिंह को मारने का षड़यंत्र करने लगा। धाय माँ पन्ना ने उदयसिंह को सुरक्षित स्थान पर भेज दिया तथा उसके पलंग पर अपने पन्द्रह वर्षीय पुत्र चंदन को सुला दिया। बनवीर ने उसे उदयसिंह समझ कर उसकी हत्या कर दी। छाती पर पत्थर रख, उस महिमामयी माँ ने अपने कलेजे के टुकड़े चंदन का दाह संस्कार किया। मातृभूमि के लिए एक माँ ने अपने पुत्र का बलिदान कर उदयसिंह का जीवन बचाते हुए राष्ट्रधर्म का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया।

उदयसिंह महाराणा सांगा के सबसे छोटे पुत्र थे। कुम्भलगढ़ में उनका विवाह पाली के अखैराज सोनगरा की पुत्री जयवंती देवी के साथ हुआ। इन्हीं की पावन कोख से 9 मई 1540 ई. (ज्येष्ठ शुक्ला तृतीया वि.स. 1597) को कुम्भलगढ़ में महाराणा प्रताप का जन्म हुआ। संयोग से इसी समय उदयसिंह ने बनवीर को हराकर चित्तौड़ प्राप्त किया। वे मेवाड़ के नये महाराणा बने। प्रताप अपनी माँ जयवंती देवी के पास कुम्भलगढ़ में रहकर शिक्षा–दीक्षा प्राप्त करने लगे। माँ ने उसे बचपन में ही स्वतंत्रता की घुट्टी पिला दी थी। निहत्थे शत्रु पर वार न करने की सलाह देकर, दो तलवारें रखने का आग्रह किया। माँ की शिक्षा से प्रताप निरंतर शस्त्र व शास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर रहे थे। कुम्भलगढ़ में ही प्रताप भील जाति के बालकों के साथ खेलने लगे थे। वे उनमें कीका के नाम से लोकप्रिय हो गए। जनजाति वर्ग के बाल–गोपालों के साथ प्रताप का यही संबंध आगे चल कर भीलों के स्वतंत्रता युद्ध में शामिल होने का आधार बना। सन् 1552 ई. में प्रताप माँ के साथ चित्तौड़ आ गए। यहाँ वे चित्तौड़ के झाली महल में रहने लगे। कृष्णदास रावत के देख–रेख में उनकी शस्त्र शिक्षा प्रारम्भ हो गई। वे शीघ्र ही तलवार, भाला तथा घुड़सवारी कला में पारंगत हो गए। इसी समय मेड़ता से चित्तौड़ आए जयमल राठौड़ से प्रताप ने युद्ध संबंधी विशेष ज्ञान प्राप्त किया। व्यूह बनाकर शत्रुदल को परास्त करने की अनेक विधियाँ सीखीं तथा खासतौर पर छापामार युद्ध कला में प्रताप ने निपुणता प्राप्त कर ली। सोलह–सत्रह वर्ष की अल्पायु में प्रताप सैनिक अभियानों पर जाने लगे। वागड़ के साँवलदास व उनके भाई करमसी चौहान को सोम नदी के किनारे युद्ध में परास्त किया। छप्पन क्षेत्र के राठौड़ों व गौड़वाड़ क्षेत्र को भी परास्त कर अपने अधीन किया। उनकी वीरता की सर्वत्र प्रशंसा होने लगी। उस समय महाराणा प्रताप का विवाह राव मामरख पंवार की पुत्री अजबदे के साथ हुआ। प्रताप ने उस समय देश की राजनीतिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त करना प्रारंम्भ कर दिया। भविष्य को ध्यान में रखते हुए प्रताप ने मित्रों का चयन कर, उन्हें प्रशिक्षित करना शुरू कर दिया। 16 मार्च 1559 ई. में प्रताप को महारानी अजबदे की कोख से अमरसिंह नामक पुत्र की प्राप्ति हुई।

भारत में उस समय अकबर अपने साम्राज्य का विस्तार करने में लगा था। सम्पूर्ण राजपूताना उसके समक्ष झुक गया था। केवल मेवाड़ अडिग था। अकबर का मेवाड़ पर आक्रमण प्रतीक्षित था। भविष्य के संघर्ष की योजना बनने लगी। प्रताप विश्वस्त मित्रों भामाशाह, ताराचंद, झाला मानसिंह आदि वीरों के साथ विजय स्तम्भ की तलहटी में सम्पूर्ण स्थितियों पर विचार करते, मेवाड़ की सुरक्षा की योजना बनाते। इसी दौरान आपसी मन मुटाव के कारण प्रताप का छोटा भाई शक्तिसिंह नाराज होकर अकबर के पास चला गया था। अकबर के मेवाड़ आक्रमण की योजना पर वह चित्तौड़ लौट आया तथा समाचार दिया। युद्ध परिषद् के निर्णय के कारण महाराणा उदयसिंह सपरिवार उदयपुर चले गए। प्रताप को भी

मन मसोस कर साथ में जाना पड़ा। पीछे कमान जयमल राठौड़ एवं पत्ता चूँड़ावत को सौंपी गई। अक्टूबर 1567 ई. में अकबर ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया। चार मास घेरा डाले रखा परन्तु उसे सफलता नहीं मिली। सर्वशक्तिमान बादशाह का गर्व चित्तौड़ के समक्ष चूर–चूर हो गया। उसने टोडरमल को भेज जयमल को खरीदने का प्रयास किया। किन्तु जयमल ने प्रस्ताव ठुकरा दिया और युद्ध में मुकाबला करने को कहा। किले में रसद खत्म हो गई। तब 25 फरवरी 1568 ई. के पावन दिन सतीत्व रक्षार्थ पत्ता चूंड़ावत की पत्नी महारानी फूल कँवर के नेतृत्व में 7000 क्षत्राणियों ने जौहर किया। उधर वीरों ने केसरिया बाना धारण कर हर हर महादेव के गगनचुम्बी उद्घोष के साथ रणभूमि हेतु प्रस्थान किया। जयमल राठौड़ के घुटने पर चोट लगने के कारण वे अपने भतीजे कल्ला राठौड़ के कंधे पर बैठ कर युद्ध करने आए। इनके चतुर्भुज स्वरूप ने मुगल सेना पर कहर बरपा दिया। यह देख अकबर भी हतप्रभ रह गया। इन्हें रोकने का प्रयास किया गया। इनका सामना करने की हिम्मत किसी में नहीं थी अंततः पीछे से वार कर जयमल एवं कल्ला राठौड़ के मस्तक काट दिए। पाडन–पोल के पास जयमल का बलिदान हुआ। साहसी वीर कल्ला का सिर कटने के बाद भी धड़ लड़ता रहा। अनेक मुगल सैनिकों को मौत के घाट उतारकर वे भी रणखेत रहे।

अकबर की सेना ने किले में प्रवेश कर वहाँ रह रहे तीस हजार निर्दोष स्त्री, पुरुष एवं बच्चों का कत्लेआम कर अपनी जीत का जश्न मनाया। महाराणा उदयसिंह इस हार को सहन नहीं कर सके। इसी दौरान उन्होंने गोगुंदा को राजधानी बनाया। अस्वस्थता के कारण 28 फरवरी 1572 ई. में होली के दिन उनका स्वर्गवास हो गया। शमशान में युवराज प्रताप को देखकर सामंतों में कानाफूसी होने लगी। तब मालूम हुआ कि भटियाणी राणी के पुत्र जगमाल को उदयसिंह ने अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। मेवाड़ की परम्परानुसार ज्येष्ठ पुत्र ही गद्दी का हकदार होता है लेकिन उदयसिंह ने महारानी की बातों में आकर जगमाल को युवराज घोषित कर दिया था। इस विपरीत परिस्थिति में कृष्णदास एवं रावत सांगा ने सामन्तों से विचार विमर्श कर महाराणा प्रताप को गद्दी पर बैठाने का निर्णय लिया। उन्होंने उदयसिंह का दाहसंस्कार कर शमशान से लौटते समय महादेवजी की बावड़ी पर प्रताप का राजतिलक कर दिया। बाद में महलों में जाकर जगमाल को गद्दी से उतार कर 32 वर्षीय प्रताप का विधिवत राज्याभिषेक किया गया। यह काँटों भरा ताज था। मेवाड़ क्षेत्रफल, धन–धान्य में छोटा हो गया था। प्रताप ने सैन्य पुनर्गठन व राज्य व्यवस्था पर ध्यान दिया। जनशक्ति को जाग्रत करने हेतु प्रताप ने भीषण प्रतिज्ञा की ''जब तक मैं शत्रुओं से अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र नहीं करा लेता तब तक मैं न तो महलों में रहूँगा, न ही सोने चाँदी के बर्तनों में भोजन करूँगा। घास ही मेरा बिछौना तथा पत्तल –दोने ही मेरे भोजन पात्र होंगे।''

इस भीषण प्रतिज्ञा का व्यापक प्रभाव हुआ। सारे जनजाति क्षेत्र के भील प्रताप की सेना में शामिल होने लगे। मेरपुर–पानरवा के भीलू राणा पूँजा अपने दल–बल के साथ प्रताप की सेना में शामिल हो गए। इन्हीं वीर सैनिकों ने वनवास काल में प्रताप का साथ दिया था। अफगानों से मेवाड़ का रिश्ता प्राचीन समय से है। बप्पारावल ने गजनी व गोर प्रदेश की राजकुमारियों से विवाह किया था। इनसे उन्हें 140 संताने प्राप्त हुई। वे नौशेरा पठान कहलाए। इन्होंने मेवाड़ के पक्ष में काम किया। अब अफगान हकीम खां सूरी भी अपनी सैन्य शक्ति के साथ प्रताप के साथ मिल गया। अकबर का साम्राज्य पूरे भारतवर्ष में फैल गया था। सारे राज्य उसके समक्ष झुक गए किन्तु मेवाड़ झुका नहीं। अकबर ने कूटनीतिक प्रयास प्रारंभ किए। उसने नवम्बर 1572 ई. में जलाल खाँ कोरची को संधि वार्ता हेतु भेजा।

प्रताप को मालूम था कि युद्ध होकर रहेगा किन्तु तैयारी हेतु समय चाहिए, इसलिए कूटनीति का जवाब कूटनीति से दिया। जलाल खां को मीठी बातें कर भेज दिया। अब दूसरे संधिकर्त्ता के रूप में आमेर का राजकुमार कुँवर मानसिंह जून 1573 ई. में वार्ता करने मेवाड़ आया। प्रताप ने उदयसागर की पाल पर उसका स्वागत किया। किन्तु मानसिंह अपने प्रयासों में सफल नहीं हो पाया। वह असफल होकर लौट गया। प्रताप व अकबर के बीच हजारों नर–नारियों के बलिदान व जौहर की लपटों की लकीर थी। हजारों ललनाओं के माँग के सिन्दूर को पार कर अकबर से समझौता करना प्रताप जैसे स्वाभिमानी एवं स्वतंत्रता के उपासक के लिए संभव नहीं था। अकबर ने फिर भी प्रयास जारी रखे। उसकी ओर से तीसरे राजदूत आमेर के राजा भगवंतदास सितम्बर 1573 ई. में महाराणा के पास आए। उन्हें भी प्रताप ने ससम्मान रवाना कर दिया। इसके बाद अकबर ने अपने नौ रत्नों में से एक टोडरमल को वार्ता के लिए भेजा। दिसम्बर 1573 ई. में, प्रताप ने टोडरमल को भी खाली हाथ लौटा दिया।

चारों संधिवार्ताओं का कूटनीतिक उत्तर देकर प्रताप ने युद्ध की तैयारी का समय प्राप्त कर लिया। इस बीच भावी समर की तैयारी पूर्ण कर ली। प्रताप ने युद्ध परिषद् की बैठक बुलाई। विचार–विमर्श के बाद निर्णय हुआ कि अकबर की विशाल सेना एवं ताकत के सामने छापामार पद्धति से ही युद्ध करना ठीक होगा। उधर अकबर ने अजमेर आकर मानसिंह व आसफ खाँ के नेतृत्व में 5000 सैनिकों को मेवाड़ पर आक्रमण करने हेतु रवाना कर दिया। मानसिंह माण्डलगढ़ होकर बनास नदी के किनारे मोलेला ग्राम पहुँच गया। प्रताप ने भी अपनी सेना का लोसिंग में पड़ाव डाल दिया। पूरे मेवाड़ के मैदानी इलाके खाली करवा कर, जनता को सुरक्षित पहाड़ों पर भेज दिया। प्रताप की सेना में 36 बिरादरी के लोग शामिल थे। प्रताप की तीन हजारी सेना शत्रुओं पर टूट पड़ने को तैयार थी। 400 भील सैनिकों ने मोर्चा बंदी कर ली थी। 18 जून, 1576 ई. का ऐतिहासिक दिन हल्दीघाटी महासंग्राम के रूप में अमर हो गया। इसी दिन प्रताप ने हल्दीघाटी के एक संकरे दर्रे से निकल कर मुगल सेना पर आक्रमण किया। राणा की सेना में झाला मान, हकीम खाँ, ग्वालियर के राजा रामसिंह तंवर आदि वीर थे। इस भीषण आक्रमण को मुगल सेना झेल नहीं पाई। सीकरी के शहजादे शेख मंजूर, गाजी खाँ बख्शी हरावल दस्ते में थे। प्रताप की सेना ने प्रचंड हमला बोला तो मुगल सेना 8–10 कोस तक भागती चली गई और मोलेला स्थित अपने डेरे तक पहुँच गई। इस पहले ही आक्रमण के कारण सारी सेना में भयंकर डर व्याप्त हो गया। ऐसी स्थिति में चंदावल दस्ते के प्रमुख मिहत्तर खाँ ने ढोल बजाकर मुगल सेना को रोका और कहा कि अकबर स्वयं सहायता को आ रहा है। इससे सेना को ढ़ाढ़स बंधा। बिखरी सेना को एकत्रित कर खमनोर ग्राम के मैदान पर लाया गया। यहाँ दोनों सेनाओं में घनघोर युद्ध हुआ।

चिरकाल की क्षुधा के बाद मेवाड़ी सैनिकों की तलवारें भूखे व्याघ्र सी लपलपाने लगीं। दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध होने लगा। प्रताप ने मानसिंह पर हमला बोला। चेतक ने अगली दोनों टाँगे हाथी के मस्तक पर दे मारी। प्रताप के सवा मण के भाले की मार से महावत मर गया, हौदा टूट गया। प्रताप ने कटार फेंकी लेकिन मानसिंह छुप कर अपनी जान बचाने में सफल रहा। शत्रु का काम तमाम समझ, प्रताप ने चेतक को हटा लिया। चेतक की टाँग, हाथी की सूँड पर लगी तलवार से कट गई फिर भी वह युद्ध भूमि में विचरण कर रहा था। महाराणा प्रताप ने तलवार के एक ही वार से जिरह, बख्तर एवं घोड़े सहित बहल्लोल खाँ के दो फाड़ कर दिए। मानसिंह का हाथी बिना महावत के मैदान से भाग गया। मुगल सेना में भगदड़ मच गई तो अतिरिक्त तोपखाना लाया गया। इस बदली हुई परिस्थिति में प्रताप ने पूर्व निर्धारित योजनानुसार अपनी सेना के दोनों भागों को एकत्रित कर पहाड़ों पर मोर्चाबंदी कर ली।

पीछे सादड़ी के झाला मानसिंह ने वीरतापूर्वक शत्रुसेना को रोकते हुए अपना बलिदान दे दिया। इस युद्ध में रक्त का तालाब बन गया था इसलिए यह क्षेत्र रक्त–तलाई कहलाया। रामदास मेड़तिया, हकीम खाँ सूरी, रामसिंह तँवर एवं उनके तीनों पुत्रों का बलिदान हुआ। प्रताप के लगभग 150 वीर शहीद हुए, मुगल सेना को भारी क्षति पहुँची, लगभग 500 सैनिक मारे गये। मेवाड़ी सेना के पहाड़ों में घात लगाये बैठे होने के कारण मुगल सेना आगे न बढ़कर अपने डेरे में लौट गई।

युद्ध से लौटते समय घायल चेतक ने प्रताप को लेकर 20 फीट चौड़ा बरसाती नाला एक छलांग में पार कर दिया। लेकिन नाला पार करते ही वह बुरी तरह से घायल हो गया। समीप ही इमली के पेड़ के पास जाकर गिर पड़ा तथा यहीं पर उसका प्राणांत हो गया। इस स्वामिभक्त तुरंग के बलिदान से प्रताप बहुत दुःखी हुए। प्रताप ने महादेव जी के मंदिर के पास उसे समाधि दी। इसी जगह चेतक का स्मारक बना है, जो हमें आज भी प्रेरणा दे रहा है। दो दिन बाद जब प्रताप गोगुंदा खाली कर कोल्यारी चले गए तो मुगल सेना गोगुंदा पहुँची तथा सुरक्षा के लिए मुगल सेना गोगुंदा के चारों ओर बाड़ एवं खाई खुदवा कर रही। प्रताप ने उनकी रसद सामग्री रोक दी फलस्वरूप मुगल सैनिकों ने विद्रोह कर अजमेर प्रस्थान कर दिया।

वांछित सफलता प्राप्ति से पूर्व ही मुगल सेना सितम्बर 1576 ई. में अजमेर लौट गई। जून में प्रारंभ हुआ यह युद्ध सितम्बर में मुगल सेना के अजमेर लौटने पर समाप्त हुआ। इस युद्ध ने अकबर के आज तक अपराजित रहने के मिथक को तोड़ दिया। अकबर इस अभियान से अत्यन्त निराश हुआ वहीं महाराणा प्रताप एवं उसके साथियों की ख्याति बढ़ी। महाराणा प्रताप भारत भर में प्रसिद्ध हो गए। हल्दीघाटी युद्ध ने प्रताप के शौर्य एवं प्रताप को चहुँ ओर फैला दिया। लगभग 4 मास तक हल्दीघाटी युद्ध चला, जिसमें अकबर जैसे भारत विजेता को मेवाड़ जैसे छोटे राज्य के सामने वांछित सफलता नहीं मिल पाई। इससे नाराज अकबर ने सेनापति मानसिंह एवं आसफ खाँ की ड्योढ़ी (दरबार में प्रवेश) बंद कर दी। अब वह स्वयं 11 अक्टूबर 1576 ई. में प्रताप को परास्त करने अजमेर से निकल पड़ा। वह खमनोर के बादशाह बाग में ठहरा। किन्तु प्रताप के पहाड़ों में छिपे होने के कारण अकबर को सफलता नहीं मिली। दिसम्बर में वह भी असफल होकर लौट आया। अक्टूबर 1577 से नवम्बर 1579 ई. के मध्य सेनापति शाहबाज खाँ को प्रताप को जिन्दा या मुर्दा पकड़ने भेजा। वह तीन बार आक्रमण करने आया। किन्तु प्रताप की छापामार युद्ध पद्धति के आगे शाहबाज खाँ असफल होकर लौट गया।

अब अकबर ने अब्दुल रहीम खानखाना को प्रताप पर आक्रमण करने भेजा। यह छठा आक्रमण था। महाराणा प्रताप के पुत्र अमरसिंह ने खानखाना के शेरपुर डेरे पर आक्रमण कर सारी सामग्री सहित उनकी बेगम आनीखान एवं पूरे परिवार को उठा कर अपने कब्जे में किया। जब अमरसिंह द्वारा बेगम एवं अन्य औरतों को बंदी बनाने का समाचार प्रताप को मिला तो उन्होंने तत्काल अपने पुत्र को समझाया कि पराई स्त्री हमारे लिए माँ के समान है। तुमने गलती की है, अब तुम्हीं इन्हें ससम्मान लौटा कर आओ। अमरसिंह ने क्षमा माँग कर बेगम सहित अन्य औरतों को उनके डेरे पहुँचा दिया। महाराणा प्रताप के इस मानवीय एवं वीरोचित व्यवहार का अब्दुल रहीम खानखाना पर गहरा प्रभाव हुआ। बेगम ने जब खानखाना को पूरा घटनाक्रम बताया तो प्रताप के चरित्र की महानता से प्रभावित होकर खानखाना बिना युद्ध किए ही मेवाड़ से लौट गया। 1576 ई. से 1584 तक लगभग आठ वर्ष मेवाड़–मुगल संघर्ष चलता रहा। इस दौरान प्रताप जंगलों में रह कर छापामार पद्धति से शत्रुओं को नुकसान पहुँचाते रहे। आबूपर्वत,

सिरोही, ईडर, मेरपुर–पानरवा, कुम्भलगढ़ और आवरगढ़ उनके प्रमुख केन्द्र थे। आवरगढ़ को संघर्षकालीन राजधानी बनाया गया। झाड़ोल के पास कमलनाथ महादेव के ऊपर की ओर यह दुर्ग महाराणा कुम्भा ने बनाया था।

हल्दीघाटी युद्ध के बाद महाराणा प्रताप के अभिन्न मित्र भामाशाह (जन्म 28 जून, 1547 ई.) व उनके भाई ताराचंद मालवा क्षेत्र को लूट कर तथा पूर्वजों का संचित धन लेकर सितम्बर 1578 ई. में आवरगढ़ में महाराणा प्रताप के समक्ष उपस्थित हुए। यह धन 25 लाख रुपये व 20,000 स्वर्ण मुद्राएँ थीं। माना जाता है कि इस धन से 25000 की सेना का 12 वर्ष तक निर्वाह हो सकता था। प्रताप अपार ध ान प्राप्त कर प्रसन्न हुए। अब तक छापामार युद्ध करते आए महाराणा ने इस धन से सेना का गठन कर दिवेर थाने पर आक्रमण कर दिया। यहाँ अकबर का चाचा सुल्तान खाँ थानेदार था। भामाशाह व कुँवर अमरसिंह के नेतृत्व में यह आक्रमण किया गया। प्रताप स्वयं भी साथ में थे। सुल्तान खाँ के हाथी के पैर काट दिये तो वह घोड़े पर सवार होकर युद्ध करने आया। अमरसिंह ने उससे मुकाबला किया।

अमरसिंह के भाले के वार ने सुल्तान खाँ को घोड़े सहित जमीन में गाड़ दिया। भाले की तीव्रता के कारण सुल्तान खाँ तड़फड़ाने लगा। भाला निकलवाने का यत्न किया गया परन्तु कोई भी वीर भाला नहीं निकाल सका। तब अमरसिंह ने एक ही झटके में भाला उसके सीने से निकाल दिया। सुल्तान खाँ ने वीर अमरसिंह को प्रशंसा की दृष्टि से देखा। फिर सुल्तान खाँ के पानी माँगने पर महाराणा प्रताप ने सैनिक सम्मान से स्वर्ण कलश में जल मँगवाकर सुल्तान खाँ को पिलाया। जल पीकर उसने प्राण त्याग दिए।

अब अकबर ने प्रताप को पकड़ने के लिए सातवाँ आक्रमण जगन्नाथ कच्छवाहा के नेतृत्व में किया। लेकिन प्रताप की रणनीति के आगे वह भी असफल होकर लौट आया। प्रताप ने लगातार मुगल थानों पर आक्रमण कर मुगल सेना को मेवाड़ से खदेड़ दिया। अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करते हुए मेवाड़ के सभी ठिकानों को स्वतंत्र करा लिया। चित्तौड़ व माण्डलगढ़ पर प्रताप के छोटे भाई सगर का राज्य होने के कारण उसे छोड़ दिया गया। समय पाकर प्रताप ने अब चावंड को अपनी राजधानी बनाया और 1585 ई. से पुनर्निर्माण का नया अध्याय प्रारंभ किया। कृषि, सिंचाई, सड़क, सुरक्षा, सैन्य पुनर्गठन किया गया। 1585 ई. से 1597 ई. तक 12 वर्षों का कालखंड मेवाड़ में वैभवकाल के रूप में स्मरण किया जाना चाहिए। इस समय अनेक मंदिरों, राजभवनों, किलों आदि का निर्माण करवाया गया। प्रताप युद्धकाल व शांतिकाल दोनों में ही महानायक के रूप में प्रमाणित हुए। अब अपने जीवन के संध्या काल में वे मेवाड़ के भविष्य को लेकर चिंतित थे। सभी सामंतों एवं युवराज अमरसिंह को बुलाकर, एकलिंग जी व दीपज्योति को साक्षी मान, मेवाड़ की रक्षा का संकल्प कराया। इस प्रकार उन्होंने अपना जीवन लक्ष्य पूर्ण किया। अपने जीवन के 57 बसंत पूर्ण कर माघ शुक्ला एकादशी तदनुसार 19 जनवरी, 1597 ई. को चावंड में अपनी इहलौकिक लीला पूर्ण की। प्रताप के देहावसान की खबर सुनकर सर्वत्र शोक की लहर फैल गई। संपूर्ण मेवाड़ में सामान्य जन से लगाकर प्रमुख लोग चावंड में एकत्रित हो गए। युवराज अमरसिंह ने विधि विधान के साथ चावंड से तीन कि.मी. दूर बंडोली के तालाब पर प्रताप का दाह संस्कार किया। उपस्थित जन मैदिनी की आँखों से अश्रुधार प्रवाहित हो रही थी। समवेत स्वर में एकलिंग नाथ की जय हो के उद्घोष से आकाश गुँजायमान हो उठा। महाराणा प्रताप की मृत्यु का समाचार अकबर

तक पहुँचा। अकबर के चेहरे की उदासी एवं निश्वास को देखकर वहीं सभा में उपस्थित कवि दुरसा आढ़ा ने अकबर के भावों को अपनी कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया –

अस लेगो अणदाग, पाग लेगो अणनामी।
गो आडा गवड़ाय, जिको बहतो धुर वामी।
नवरोजे नहं गयो, न को आतसा नवल्ली।
न गो झरोखै हेठ, जेठ दुनियाण दहल्ली।
गहलोत राण जीती गयो, दसण मूंद रसना डसी।
नीसास मूक भरिया नयण, तो म्रत साह प्रतापसी।।

''हे प्रतापसिंह तूने अपने घोड़े पर अकबर की अधीनता का चिह्न नहीं लगवाया और अपने चेतक को बेदाग ले गया; अपनी मेवाड़ी पगड़ी अकबर के सामने कभी तुमने झुकने नहीं दी वरन अनमी पाग लेकर चला गया। हमेशा मुगल सत्ता के विपरीत चलकर तूने अपनी वीरता की कीर्ति के गीत गवाए। जिस मुगलिया झरोखे के नीचे आज सारी दुनिया है तू कभी न तो उस झरोखे के नीचे आया, ना ही अकबर के नवरोज कार्यक्रम में उपस्थित हुआ। हे महान वीर! तू जीत गया। तेरी मृत्यु पर बादशाह ने आँखें मूँद कर, दाँतों के बीच जीभ दबाई, निःश्वासें छोड़ीं और उनकी आँखों में आँसू भर आए। गहलोत राणा (प्रताप) तेरी ही विजय हुई।'' दुरसा का यह छप्पय सुनकर सभासदों ने सोचा कि बादशाह दुरसा से नाराज होंगे लेकिन अपने मन की व्यथा को कविवाणी में साक्षात हुई देख बादशाह ने दुरसा को सम्मानित किया। ऐसे प्रणवीर प्रताप धन्य हैं। हे स्वातंत्र्य वीर! तेरी यह गाथा हमें युगों–युगों तक प्रेरणा देती रहेगी।

अभ्यास के लिए प्रश्न

1. महाराणा प्रताप का जन्म हुआ –

   (क) 9 मई 1540 (ख) 9 मई 1541

   (घ) 10 मई 1540 (घ) 15 मई 1542 ( )

2. प्रताप किस विशेष युद्ध कला में निपुण थे –

   (क) तलवारबाजी (ख) छापामार युद्ध

   (ग) तीरंदाजी (घ) मल्लयुद्ध ( )

3. हल्दीघाटी युद्ध कब हुआ –

   (क) 18 जून 1575 (ख) 18 जून 1576

(ग) 18 जून 1577 (घ) 18 मई 1575 ( )

4. महाराणा सांगा के सबसे छोटे पुत्र का नाम क्या था –

(क) उदयसिंह (ख) विक्रमादित्य

(ग) अमरसिंह (घ) जगमालसिंह ( )

5. प्रताप की भीषण प्रतिज्ञा क्या थी ? इसका क्या प्रभाव पड़ा ?

6. महाराणा प्रताप ने मरणासन्न ''सुल्तान खाँ को जल पिलाकर उसकी अन्तिम इच्छा ही पूर्ण नहीं की बल्कि महानता का परिचय दिया।'' इस संबंध में अपने विचार प्रकट कीजिए।

7. कवि दुरसा आढ़ा ने प्रताप की वीरता का वर्णन किस रूप में किया ?

8. ''धर रहसी, रहसी धरम'' प्रसिद्ध कवि रहीमजी ने उक्त पंक्तियाँ प्रताप के किस रूप से प्रेरित होकर कही ?

9. महाराणा प्रताप ने अकबर के कूटनीतिज्ञ प्रयासों का जवाब कूटनीति से ही दिया । समझाइए।

10. 'रक्त तलाई' नाम की सार्थकता पर अपने विचार प्रकट कीजिए ।

11. ''प्रताप ने बाल्यकाल में ही शस्त्र व शास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर लिया था।'' प्रताप के बाल्यकाल का वर्णन करते हुए स्पष्ट करें।

12. ''हल्दीघाटी युद्ध में वीरों के साथ–साथ चेतक का बलिदान भी अविस्मरणीय है।'' स्पष्ट करें।

13. अकबर ने मेवाड़ को अपने अधीन करने के लिए कितने आक्रमण किए ? तीसरा आक्रमण कब व किसके नेतृत्व में किया ? उसका क्या परिणाम रहा ?

14. 'हल्दीघाटी का युद्ध इतिहास के अविस्मरणीय युद्धों में से एक हैं? युद्ध का वर्णन विस्तारपूर्वक करते हुए स्पष्ट करें।

15. 'महाराणा प्रताप की वीरता, शौर्य, कूटनीतिज्ञता, प्रणप्रतिज्ञा' आज भी हमारे लिए प्रेरणा–पुंज के समान है।'' इस कथन के आलोक में महाराणा प्रताप की चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

16. चितौड़ युद्ध में जयमल राठौड़, पत्ता चूँडावत तथा कल्ला राठौड़ का शौर्य एवं पराक्रम इतिहास प्रसिद्ध है।'' चितौड़ युद्ध का वर्णन करते हुए इस कथन को सिद्ध कीजिए।

पाठ के आस–पास

आपके आस–पड़ोस में वीरता की ऐसी कोई कहानी हो तो उसे कंठस्थ कीजिए।

शब्दार्थ :

शाश्वत–अपरिवर्तनशील / सुभट– अच्छी, योग्य / धारा–स्नान–युद्ध भूमि में लहुलुहान होते हुए बलिदान होना। / रज – मिट्टी /तासीर–प्रकृति /सानी–बराबरी /निहत्थे –

जिसके पास हथियार न हो / छापामार युद्ध –युद्ध का एक प्रकार जिसमें छिप कर वार किया जाता है /जौहर – क्षत्राणियों द्वारा सतीत्व रक्षार्थ किया जाने वाला अग्नि स्नान

/बिरादरी– जाति /तुरंग – घोड़ा /मिथक – झूठ, भ्रम /बंदी– कैदी /निहारना – देखना / कत्लेआम – तलवार द्वारा सिर काटना/मार–काट करना /पत्तल–दोने–पत्तों द्वारा बनाए गए भोजन पात्र / जिरह, बख्तर – युद्ध के समय शरीर पर पहने जाने वाला लौह–कवच / छक्के छूटना (मु.) –भयभीत होना / मौत के घाट उतारना (मु.) – मारना / रक्त तलाई – खून का तालाब / प्रस्थान – जाना /घुटने टेकना (मु.)– पराजय स्वीकार करना

अध्याय–2
रानी लक्ष्मीबाई
(संकलित)

1857 ई. के स्वाधीनता संग्राम के कालखंड में झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई ऐसी अनुपम महिला थीं जिसका जीवन, आचरण व कौशल सम्पूर्ण समाज की प्रेरणा का स्रोत है। प्रतिभा, पुरुषार्थ व प्रखर राष्ट्रभक्ति में वह विश्व का अद्‌वितीय उदाहरण है। नाम तो इनका लक्ष्मी था, अतः गुण–धर्म व धन–सम्पति की भण्डार मानी जानी चाहिए परन्तु इन्होंने अपने व्यवहार से प्रकट कर दिया था कि इनमें असीम साहस था। कोमल कलाइयों में चूड़ियाँ तो धारण करती थीं, परन्तु घोड़े पर सवार होकर करतब करते समय तलवार हाथ में लेकर जो पराक्रम करती थीं तो जन–जन के जीवन में उत्साह की तरंगें दौड़ उठती थीं।

महारानी लक्ष्मीबाई का जन्म वाराणसी में 19 नवम्बर 1835 को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री मोरोपन्त ताम्बे व माँ का नाम भागीरथी था। बचपन में इस बालिका का नाम मणिकर्णिका रखा गया था परन्तु स्नेह से लोग इन्हें मनुबाई कहकर पुकारते थे। चार वर्ष की अवस्था में इनकी माता का देहावसान हो गया। पिता पर ही उनके पालन–पोषण का भार आ गया। उसी कालखण्ड में मोरोपन्त ताम्बे अपने परिवार को लेकर काशी छोड़कर ब्रह्मवर्त (बिठूर, कानपुर) पहुँच गए तथा बाजीराव के आश्रय में रहने लगे। वहाँ उन्हें छबीली कहकर पुकारा जाने लगा। बचपन से ही छबीली का नाना साहब पेशवा के साथ अत्यन्त आत्मीयतापूर्ण व पवित्रतायुक्त सम्बन्ध था। वहीं पर तांत्या टोपे से भी उनका सम्पर्क बन गया था। नाना साहब के साथ–साथ ही छबीली के पराक्रम का प्रशिक्षण प्रारम्भ हो गया था। वे दोनों घोड़ों पर सवार होकर अभ्यास करते थे एवं शस्त्र चलाना सीखते थे। छबीली का अभ्यास इतना उत्तम था कि उसका कौशल नाना साहब पेशवा से अच्छा होने लगा। जैसे–जैसे उसकी आयु बढ़ने लगी, पिता के मन में उसका विवाह करने का भाव आया। उन दिनों विवाह अल्प आयु में ही होता था। सन् 1842 में छबीली का विवाह झाँसी के महाराजा गंगाधर राव के साथ संपन्न हो गया। उसी समय वह झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई कहलाने लगी। दरबार में वह जनप्रिय बन गईं व उनके जीवन में समाज हित के भाव के कारण जन–जन में उनके प्रति भक्ति पनप उठी। महिला सेविकाओं व सहयोगियों से इनके अत्यन्त आत्मीयतापूर्ण सम्बन्ध थे। अतः उनको भी शस्त्रास्त्र चलाने का अभ्यास करवाया जाने लगा।

कुछ दिनों बाद लक्ष्मीबाई ने एक पुत्र को जन्म दिया परन्तु शैशव में ही उसकी मृत्यु हो गई। इसके परिणामस्वरूप महाराजा गंगाधर राव के मन में असीम वेदना पैदा हो गई। इसे दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि वे भी 21 नवम्बर, 1853 को दिवंगत हो गए। इनके आकस्मिक निधन के बाद महारानी ने एक बच्चे दामोदर को गोद लिया। पति के दिवंगत होने पर उन्होंने राज्य का दायित्व सँभाल लिया। अपने आभूषण उतारकर पुरुष वेश में उन्होंने दरबार में जाना प्रारम्भ कर दिया। कभी–कभी नगर के विभिन्न क्षेत्रों में जाकर प्रजा के कष्टों व समाज की समस्याओं की पूरी जानकारी प्राप्त करके उनका निदान करती थीं।

इस घटना के उपरांत अंग्रेजी शासकों ने षडयन्त्रपूर्वक रानी लक्ष्मीबाई को न तो झाँसी का अधिपति स्वीकार किया और न उसके दत्तक पुत्र दामोदर को उनकी संतान के रूप में स्वीकार किया। भारतीय परम्परा के अनुसार दामोदर ही भावी राजा था परन्तु उसकी आयु अत्यंत कम होने के कारण उसकी माँ ही सत्ता का दायित्व सँभाल रही थीं। अंग्रेजी शासकों ने इसी श्रेणी के उन अनेक लोगों की मान्यता स्वीकार की थी जो अंग्रेजी सत्ता के सहयोगी व समर्थक थे परन्तु महारानी झाँसी व नाना साहब पेशवा के साथ यह व्यवहार नहीं किया गया। अंग्रेजों का यह व्यवहार रानी को बहुत बुरा लगा। अंग्रेजी शासकों की सूचना व निर्देश पाकर लक्ष्मीबाई क्रोधित हुईं और बोल उठीं, ''क्या मैं झाँसी छोड़ दूँगी ? जिनमें साहस हो, वे आगे आए।'' उन्होंने अंग्रेजों को ललकारा।

16 मार्च 1854 को अंग्रेजों ने रानी का राज्य हड़प लिया। रानी लक्ष्मीबाई के मन में अंग्रेजों के प्रति घोर असंतोष एवं घृणा पनप गई। तांत्या टोपे ने आकर उन्हें स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने का सुझाव दिया। उन्होंने क्रांति का दायित्व सम्भाल लिया। अंग्रेजों को मार भगाया तथा झाँसी पर पुनः सत्ता स्थापित कर ली। क्रांतिकारियों ने इस क्षेत्र में अंग्रेजों को इस तरह पराजित किया कि सागर, नौगाँव, बाँद्रा, बन्दपुर, शाहगढ़ तथा कर्वी में अंग्रेजी सत्ता का कोई प्रभाव नहीं बचा था। रानी की सर्वत्र जय–जयकार हो रही थी। विंध्याचल से यमुना तक के क्षेत्र अंग्रेजों से मुक्त हो चुके थे। हिन्दू, मुसलमान, सैनिक, पुलिस, राजा, किसान व बहुत सी महिलाएँ व निर्धन लोग भी संघर्षरत थे। सभी का लक्ष्य स्वाधीनता था।

1858 के प्रारम्भ में अंग्रेजों ने हिमालय की समस्त भूमि को क्रांतिकारियों से छीनकर अपनी सत्ता स्थापित करने के लिए योजना बनाई। अंग्रेजों की ओर से यमुना व विंध्याचल तक के क्षेत्र को क्रांतिकारियों से मुक्त कराने का दायित्व सर ह्यूरोज को सौंपा गया। अस्त्र–शस्त्र से सुसज्जित तथा बहुत सी तोपों के साथ वह निकल पड़ा। उसकी सहायता के लिए हैदराबाद, भोपाल व कई राज्यों के सैनिक मिल गए। सर ह्यूरोज महू से चलकर झाँसी होते हुए कालपी पहुँचने का निश्चय कर चुका था। उसने 6 जनवरी 1858 को रायगढ़ के दुर्ग पर कब्जा कर लिया। क्रांतिकारियों द्वारा बनाए गए बंदियों को मुक्त करवा लिया। उसके बाद 10 मार्च को वह दानपुर पहुँचा और चन्देरी के सुप्रसिद्ध दुर्ग पर अधिकार कर लिया। वह आगे बढ़ता गया। उसने 20 मार्च को झाँसी से चौदह मील दूर पड़ाव डाल दिया। झाँसी के पास शत्रु की सेना के आगमन का समाचार पाते ही रानी लक्ष्मीबाई अत्यन्त आक्रोशित हो उठी। रानी ने प्रबल संघर्ष की ठान ली। रानी के साथ ही बानपुर के राजा मर्दानसिंह, शाहगढ़ के नेता बहादुर ठाकुर बुंदेलखण्ड के सरदार भी क्रुद्ध हो उठे। सभी ने निर्णय लिया कि देश के सम्मान के लिए अंग्रेजों से युद्ध किया जाए। कठिनाई केवल यही थी कि सैनिकों में वीरता तो थी परन्तु कुछ लोग ऐसे भी थे जिनमें कौशल व अनुशासन का अभाव था। रानी ने तोपों की व्यवस्था की, उनके लिए कुशल संचालक जुटाए।

महिलाओं ने हथियार लिए तो पुरुषों ने तोपें उठाईं। 25 मार्च को युद्ध प्रारम्भ हो गया। पहरेदारों द्वारा गोलियाँ दागी जाने लगीं, तोपें गरजने लगीं। 26 मार्च को अंग्रेजों ने दक्षिणी द्वार का तोपखाना बंद करवा दिया। पश्चिमी द्वार के तोपखाने के गोलंदाज ने चारों ओर प्रहार शुरु कर दिया। उसने अंग्रेजी तोपखाने को उड़ा दिया। अंग्रेजी तोपखाना बंद हो गया। पाँच–छः दिन बाद फिर भयंकर युद्ध हुआ। रानी के तोपखाने ने अंग्रेजों को काफी हानि पहुँचाई। सातवें दिन अंग्रेजों ने तोपें चलाकर दीवार गिरा दी परन्तु क्रांतिकारियों ने रातों रात उसे पुनः खड़ा कर दिया।

आठवें दिन अंग्रेजी सेना शंकर दुर्ग की ओर बढ़ी। दुर्ग के भीतर गोले बरसाना शुरु कर दिया। कुछ लोग हताहत हुए। क्रांतिकारियों ने पुनः पुरुषार्थ का परिचय देते हुए अंग्रेजों की तोपों को शान्त कर दिया। रानी लक्ष्मीबाई इन सबकी देख–रेख कर रही थी तथा सैनिकों को प्रोत्साहन एवं दिशा–निर्देश दे रही थी। उसी के परिणामस्वरूप अंग्रेज 31 मार्च तक दुर्ग में प्रवेश न कर सके। लक्ष्मीबाई का संदेश पाते ही तांत्या टोपे उनकी सहायता करने झाँसी आ गए तथा उन्होंने अपने सैनिकों को साथ ले अंग्रेजों पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेजों तथा तांत्या टोपे के बीच भयंकर युद्ध हुआ। अंग्रेजों की विशाल सेना के सामने तांत्या टोपे के सैनिक डगमगाने लगे। वे भाग खड़े हुए। उनकी तोपें अंग्रेजों के हाथ में आ गई। तांत्या टोपे के 2200 में से 1400 सैनिक मारे गए। तांत्या टोपे की पराजय पर रानी ने झाँसी के नागरिकों को निराश न होकर हौसला रखने का आह्वान करते हुए कहा कि ''हम लोग दूसरों पर निर्भर न रहें, अपने पराक्रम व वीरता का परिचय देने के काम में जुट जाएँ।''

3 अप्रैल को अंग्रेजों का झाँसी पर अंतिम आक्रमण हुआ। उन्होंने मुख्य द्वार से प्रवेश किया। हर कोने से गोलियाँ चलने लगी। सीढ़ियाँ लगाकर अंग्रेजों ने दुर्ग पर चढ़ने का प्रयास शुरू कर दिया। परन्तु सफलता पाना इतना सरल न था। आगे बढ़ने वाले अंग्रेजों को मौत के घाट उतार दिया जाता था। रानी लक्ष्मीबाई तथा उसके वीर सैनिकों के सामने अंग्रेजों का वार नहीं चला और अंततः उन्हें पीछे हटना पड़ा। अंग्रेज सैनिक जान बचाकर भागे। मुख्य द्वार पर तो यह स्थिति थी परन्तु दक्षिणी द्वार पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया। वे दुर्ग के भीतर घुस गए। राजप्रासाद में घुसकर उन्होंने रक्षकों की हत्या की, रुपये लूटे और भवनों को ध्वस्त कर डाला। इससे झाँसी का पतन होने लगा। यह स्थिति देखकर लक्ष्मीबाई ने डेढ़ हजार सैनिकों को लेकर दुर्ग की ओर कूच किया तथा अंग्रेजों पर टूट पड़ीं। अनेक अंग्रेज मारे गए, शेष नगर की ओर भागने लगे। परन्तु वहाँ से छिप–छिप कर गोलियाँ चलाने लगे। अंग्रेजों से लोहा लेते हुए झाँसी के अनेक वीरों ने प्राण न्यौछावर किए। अंग्रेजों ने सैनिकों के साथ आम नागरिकों पर भी वार करना शुरु कर दिया, जिससे नगर में हाहाकार मच गया। यह देखकर लक्ष्मीबाई परेशान हो गई। अपनी व्यथा प्रकट करते हुए वह स्वयं अपना बलिदान करने को तैयार हो गई परन्तु झाँसी के स्वामिभक्त सरदार ने उनसे कहा, ''हे महारानी! अब आपका यहाँ रहना खतरे से खाली नहीं है। अतः रात्रि को शत्रु का घेरा तोड़कर आप बाहर निकल जाएँ। यह अत्यावश्यक है।''

रानी ने रात्रि में झाँसी छोड़ने का संकल्प ले लिया। चुनिंदा विश्वस्त अश्वारोही सैनिकों के साथ रानी ने पुरुष वेश धारण कर दुर्ग से प्रस्थान किया। रानी ने अपने दत्तक पुत्र दामोदर को पीठ पर रेशम के कपड़े से बाँध कर हाथों में शस्त्र उठाया। रानी का बदन लौह कवच से ढका हुआ था। द्वार पर खड़े अंग्रेज सन्तरी ने उनसे परिचय पूछा, रानी ने तपाक से उत्तर दिया, ''तेहरी की सेना सर ह्यूरोज की सहायता के लिए जा रही है।'' संतरी उन्हें पहचान न सका। उसे चकमा देकर रानी दुर्ग से बाहर निकल गईं। वो कालपी के मार्ग पर चल पड़ीं। रास्ते में बोकर नामक एक अंग्रेज अधिकारी मिल गया। रानी

ने उसे तलवार से घायल कर दिया व अश्वारोहियों ने अंग्रेज सैनिकों पर इतना घातक आक्रमण किया कि वे भाग खड़े हुए। दो दिन बाद वे कालपी पहुँचीं। एक सौ दो मील की यात्रा करनी पड़ी। वहाँ पहुँचते ही रानी का घोड़ा धराशायी हो गया। उसका जीवन समाप्त होते ही एक समस्या खड़ी हो गई। उन्हें उत्तम स्वामिभक्त घोड़ा चाहिए था।

अंग्रेजों को रानी के दुर्ग छोड़कर जाने का आभास हो गया था। अतः अंग्रेजी सेना ने व्हाटलॉक के नेतृत्व में कालपी पर आक्रमण कर दिया। रानी ने राव साहब, तांत्या टोपे तथा बाँद्रा, शाहगढ़ व दानपुर के राजाओं के सैनिकों को साथ लेकर अंग्रेजों का सामना करते हुए उन्हें मुँह तोड़ जवाब दिया। लेकिन दुर्भाग्य यह रहा कि इन विविध राज्यों के सैनिकों में पारस्परिक समन्वय एवं अनुशासन का अभाव था, जिसके कारण अंग्रेजों के सामने वे ज्यादा देर टिक नहीं पाए। रानी को कालपी से ग्वालियर की ओर जाना पड़ा। क्रांतिकारियों ने ग्वालियर की जनता को भी रानी की सहायता के लिए प्रेरित किया था। जनता अंग्रेजों को सामने देखकर अपनी सेना के साथ उन पर टूट पड़ी। इस प्रबल आक्रमण से अंग्रेजी सेना बौखला गई। अनेक अंग्रेज सैनिक मौत के घाट उतार दिए गए। परिस्थिति क्रांतिकारियों के पक्ष में बनती देख अंग्रेज कमांडर स्मिथ को पीछे हटना पड़ा। लेकिन संघर्ष रुका नहीं। दूसरे दिन कमांडर स्मिथ ने अधिक सेना लेकर पुनः चढ़ाई कर दी। रानी ने अपने शिविर से बाहर निकल कर पूरे साहस के साथ अंग्रेजों पर आक्रमण कर दिया। लेकिन अचानक किए इस आक्रमण में क्रांतिकारियों के अनेक सैनिक वीरगति को प्राप्त हो गए। सैनिक संख्या कम हो जाने के कारण रानी समस्या में पड़ गई। अंग्रेज सेना की विजय हुई। विजयी अंग्रेज–सेना चारों ओर से एकत्रित होकर घेरा डालने में जुटी थीं। एक अंग्रेज सैनिक ने रानी की एक सहायक दासी को गोली मार दी। रानी ने मुड़कर उस अंग्रेज–सैनिक को अपनी गोली का निशाना बनाते हुए वहीं ढेर कर दिया।

अब रानी लक्ष्मीबाई तेजी से आगे बढ़ चली। परन्तु वह जिस घोड़े का उपयोग कर रही थी वह इतना कुशल एवं सक्षम न था। आगे बढ़ने पर एक नाला आ गया। महारानी की प्राण–रक्षा इसी पर निर्भर थी कि घोड़ा छलाँग मार कर नाला पार कर जाए परन्तु वह उसका अपना प्रशिक्षित घोड़ा न था। उसने छलाँग नहीं लगाई। इसका फायदा उठाकर कुछ अंग्रेज सैनिकों ने रानी को घेर लिया। सोनरेखा नामक इस नाले पर चारों ओर से शत्रुओं द्वारा घिरी हुई अकेली रानी भूखी शेरनी की तरह अंग्रेजों पर टूट पड़ी। तलवारों से तलवारें बजने लगी। रानी ने अदम्य साहस का परिचय देते हुए अंग्रेजों का सामना किया परन्तु एक अंग्रेज–सैनिक ने मौका पाकर पीछे से रानी के मस्तक पर प्रहार कर डाला। महारानी घायल हो गई परन्तु प्रहार करने वाले अंग्रेज को उसने अपनी तलवार से ढेर कर दिया। उसी समय दूसरे अंग्रेज सैनिकों ने उन पर ताबड़तोड़ प्रहार करना शुरु कर दिया। रानी बेहोश होकर गिर पड़ीं। अचेत महारानी को अंग्रेजों के हाथों बंदी बनने से बचाने के लिए उनके विश्वासपात्र सेवक रामचन्द्र राव देशमुख एवं रघुनाथ सिंह ने उनको उठाकर पास में बनी बाबा गंगादास की झोंपड़ी में पहुँचा दिया।

इस महान क्रांतिकारी व प्रखर देशभक्त रानी को ऐसी स्थिति में देखकर बाबा गंगादास भाव विह्वल हो गए। उन्होंने रानी का आवश्यक प्राथमिक उपचार करते हुए उन्हें पानी पिलाया तथा एक शैया पर लिटा दिया। लेकिन होनहार बलवान है, बाबा रानी को बचा नहीं पाए। रानी लक्ष्मीबाई ने संसार त्याग कर दिया। वक्त की नजाकत को देखते हुए बाबा एवं क्रांतिकारियों ने सूझबूझ से काम लिया। अंग्रेजों की नजर से बचते हुए बाबा गंगादास ने घास–फूस की चिता बनवाकर अपनी झोपड़ी के पास ही उस दुर्गास्वरूपा देवी का दाहसंस्कार किया। बाबा सहित सब उपस्थित क्रांतिकारियों ने चिता की

भस्म से तिलक किया तथा मातृभूमि के प्रति उनके प्रेम एवं योगदान को बारंबार याद किया। मातृभूमि की रक्षार्थ साहस, दृढ़ता एवं सूझबूझ के साथ अंग्रेजों का सामना करने वाली महान देशभक्त नारी महारानी लक्ष्मीबाई अपने समर्पण के कारण संपूर्ण राष्ट्र की श्रद्धा का केंद्र बन गई। दूसरों के सुख के लिए स्वयं के सुखों का बलिदान करने वाली महारानी वंदनीय है। उनका बलिदान–स्थल ग्वालियर हिंदुस्तानियों का तीर्थस्थल बन गया। उनका यह बलिदान सदा–सर्वदा स्मरणीय है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

प्र. 1 रानी लक्ष्मीबाई को स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने का सुझाव देने वाले थे–

(क) नाना साहब पेशवा (ख) तांत्या टोपे

(ग) मोरोपंत ताम्बे (घ) बाजीराव

प्र. 2 रानी लक्ष्मीबाई का प्राणांत कहाँ हुआ–

(क) झाँसी में (ख) कालपी में

(ग) बाबा गंगादास की कुटिया में (घ) अंग्रेज छावनी में

प्र. 3 महारानी लक्ष्मीबाई का जन्म कहाँ और कब हुआ?

प्र. 4 लक्ष्मीबाई का बचपन कहाँ और किसके साथ बीता?

प्र. 5 मणिकर्णिका झाँसी की महारानी कब और कैसे बनी?

प्र. 6 अंग्रेज शासकों से महारानी का संघर्ष कैसे प्रारम्भ हुआ? स्पष्ट कीजिए?

प्र. 7 तांत्या टोपे ने लक्ष्मीबाई को क्या सुझाव दिया और लक्ष्मीबाई ने उसका सम्मान क्यों किया?

प्र. 8 सन् 1857 ई. में लक्ष्मीबाई एवं अंग्रेजों के मध्य हुए युद्ध का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

प्र. 9 तांत्या टोपे की सेना को अंग्रेजों ने क्या हानि पहुँचाई?

प्र. 10 महारानी लक्ष्मीबाई को किन परिस्थितियों में झाँसी छोड़ना पड़ा?

प्र. 11 अंग्रेजों ने कालपी पर आक्रमण क्यों किया?

प्र. 12 क्रांतिकारियों की सेना को पराजय का मुँह क्यों देखना पड़ा?

प्र. 13 महारानी लक्ष्मीबाई के अन्तिम संघर्ष की महागाथा अपने शब्दों में प्रकट कीजिए।

प्र. 14 महारानी लक्ष्मीबाई का दाहसंस्कार किसने और कहाँ किया?

प्र. 15 सही विकल्प को चिह्नित कीजिए :–

(क) गंगाधर राव लक्ष्मीबाई के पिता/पति/भाई थे।

(ख) लक्ष्मीबाई के पुत्र का नाम तांत्या टोपे/गंगाधर राव/दामोदर राव था।

(ग) लक्ष्मीबाई का बचपन तांत्या टोपे/गंगाधर राव/नानासाहब पेशवा के साथ बीता था।

(घ) लक्ष्मीबाई का जन्म प्रयाग/वाराणसी/ग्वालियर में हुआ था।

पाठ के आसपास

अपने आस पास हुई किसी वीरांगना की ऐसी कहानी हो तो कंठस्थ कर कक्षा में सुनाइए।

कठिन शब्दार्थ

शैशव– शिशु अवस्था /दत्तक– गोद लिया गया पुत्र / हड़पना– अनुचित रीति से ले लेना / बन्दी– कैदी / आक्रोश– गुस्सा

/ प्रहार– आक्रमण / गोलंदाज– गोला फेंकने वाला / दुर्ग– किला / ध्वस्त– नष्ट

/ कूच करना– प्रस्थान करना / अश्वारोही– घुड़सवार / कालखण्ड– समयावधि

/ पराक्रम– बहादुरी / निदान– समाधान / भावी– आगामी/होने वाला

/ सर्वनाश– समूल नाश / ढेर होना– मृत्यु को प्राप्त होना / सक्षम– योग्य

/ ललकारना– चुनौती देना/आह्वान करना / आघात– चोट

अध्याय–3

राष्ट्रमंदिर का सुवासित पुष्प : केसरीसिंह बारहठ

–डॉ. रामचरण महेन्द्र

स्वाधीनता यद्यपि एक जन्मसिद्ध अधिकार है, लेकिन इस अधिकार की प्राप्ति के लिए संघर्ष की रक्त गाथा लिखने वाले आत्मबलिदानियों की एकांतिक पीड़ा व्यथा को अभिव्यक्ति देने के लिए समाज और इतिहास के पास शब्द कहाँ हैं ? वे रोशनी की लकीरें, जिन्होंने स्याह अंधेरे को चीर कर आजादी की राह बनाई, स्वयं को ही नहीं, सम्पूर्ण परिवार को और उनके जीवन को ही देश की आजादी के लिए दाँव पर लगा दिया, उन्हीं गिने–चुने स्मरणीय एवं वंदनीय अमर हुतात्माओं में से एक थे – ठाकुर केसरीसिंह बारहठ।

राजस्थान में इतिहास लेखन और इतिहास निर्माण की विशिष्ट परम्परा रही है। महाकवि चंदरबरदायी के बाद यह परम्परा महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण से चलती हुई उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में शाहपुरा के लोक विख्यात इतिहासज्ञ श्री कृष्णसिंह जी बारहठ तक पहुँची थी, जिन्होंने महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण के विशाल इतिहास काव्य ग्रन्थ 'वंश भास्कर' को सुपाठ्य बनाने के लिए उदधिमंथनी टीका तैयार की थी, जो जोधपुर के मुरारीदान प्रेस से प्रकाशित हुई थी। इसी परिवार में जन्मे थे श्री केसरीसिंह बारहठ, जोरावर सिंह बारहठ एवं प्रतापसिंह बारहठ जिन्होंने मातृ–भूमि के सौभाग्यश्री का श्रृंगार करने के लिए अपने प्राणों को भी न्यौछावर कर दिया था।

भारत के स्वातंत्र्य संग्राम में सम्पूर्ण बारहठ परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यद्यपि केसरीसिंह जी का बाल्यकाल मेवाड़ में बीता तथा प्रारम्भिक शिक्षा भी वहीं संपन्न हुई किंतु कोटा नगर उनके जीवन के संघर्ष का केंद्र रहा और यहीं उनके जीवन के अंतिम पड़ाव की स्थली भी बनी। गुमानपुरा में अवस्थित 'माणिक भवन', जो अमर शहीद प्रतापसिंह की मातृश्री माणिक कुँवर की स्मृति में बनाया गया था, के बाहर चबूतरे में श्रीमती माणिक कुँवर के अस्थि–अवशेष सुरक्षित हैं। इसी चबूतरे पर बैठकर प्रतापसिंह के आत्मबलिदान एवं श्रीमती माणिक कुँवर की अनंत जुदाई के बाद के जीवन के एकाकी क्षण केसरीसिंह बारहठ ने बिताए थे। माणिक भवन हाड़ौती अंचल का 'स्वराज भवन' है, जहाँ देश की आजादी के ताने–बाने बुने गए थे।

श्री केसरीसिंह बारहठ महर्षि दयानन्द सरस्वती के समकालीन थे। शाहपुरा में आर्यसमाज की स्थापना के बाद उनका आर्यसमाज से उन्हें घनिष्ठ संपर्क बना। उदयपुर के दीवान सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा, के साथ कार्य करने का अवसर भी मिला था। राष्ट्रीय स्वातंत्र्य संग्राम से जुड़ने के बाद में तो वे राष्ट्रीय स्तर के नेता के रूप में स्वीकार कर लिए गए थे, जिन्होंने स्वजनों और परिजनों सहित माँ भारती के प्रांगण में प्राण प्रसून अर्पित किए थे।

उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह के उदार एवं विश्वस्त सलाहकार और 'वीर विनोद' इतिहास ग्रन्थ के सुप्रसिद्ध लेखक कविराजा श्यामलदास की छत्र–छाया में अपना अध्ययन समाप्त कर सन् 1900 में कोटा के तत्कालीन शासक महाराव उम्मेदसिंह के आग्रह पर कोटा रियासत में राजकीय दायित्वों का निर्वाह करने लगे और यहीं कोटड़ी ठिकाने के कविराजा देवीदान की बहिन माणिक कुँवर से आपका विवाह हुआ और कोटा ही जीवन पर्यंत आपका कार्यक्षेत्र एवं कर्मक्षेत्र रहा।

अब तक केसरीसिंह को संस्कृत के उद्भट विद्वान और शास्त्रों के ज्ञाता के रूप में सर्वत्र मान्यता मिल चुकी थी। राजनीति, क्षात्रधर्म, समाज सुधार, शिक्षा प्रसार आदि विषयों के संबंध में प्रकाशित उनके लेखों से भारतीय पाठक वर्ग परिचित हो चला था। वे राजस्थानी एवं ब्रजभाषा के सुप्रसिद्ध कवि थे। इस भाँति बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में केसरीसिंह राजपूताने में एक प्रभावशाली व्यक्तित्व के रूप में उभर चुके थे और राजपूताने के अधिकांश राजा महाराजा, जागीरदार एवं प्रबुद्ध जन, सामान्य–जन उनको सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

वे सदैव स्वदेश, स्वराज्य, स्वाधीनता और स्वाभिमान के पक्षधर रहे। केसरीसिंह बारहठ के लिए राष्ट्रीय स्वाभिमान सर्वोपरि था। वे नहीं चाहते थे कि राष्ट्रीय स्वाभिमान के रक्षक मेवाड़ के महाराणा दिल्ली दरबार में जाकर अन्य भारतीय नरेशों की भाँति तलवार जमीन पर रख कर कोर्निश बजाएँ। अतः जब उन्हें पता चला कि उदयपुर के महाराणा भी दासता के इस भव्य प्रदर्शन में सम्मिलित होने जा रहे हैं तो कवि का राष्ट्रीय स्वाभिमान आहत हो उठा। उन्होंने तत्क्षण ही 'चेतावनी रा चूंगट्या' शीर्षक से मर्मभेदी भाषा में तेरह सोरठे लिख कर महाराणा को भेजे, जिनके द्वारा उन्होंने महाराणा प्रताप द्वारा सर्वस्व त्याग एवं बलिदान की परंपरा का भान कराया। ट्रेन उदयपुर से रवाना हो चुकी थी, अतः संदेश वाहक चित्तौड़ स्टेशन पर मिला। कर्जन राजस्थान गौरव को अपने दरबार में सिर झुकाए खड़ा देखने की राह देख रहा था, लेकिन उदयपुर के महाराणा दिल्ली दरबार में न तब गए, न अब गए। इस घटना से केसरीसिंह की काव्योचित प्रतिभा का प्रसार तो हुआ, लेकिन वे ब्रिटिश सरकार के आँख की किरकिरी बन गए।

इसी बीच में 'अभिनव भारत' नाम से क्रांतिकारियों के गुप्त संगठन का गठन खरवा के ठाकुर गोपालसिंह, जयपुर के अर्जुनलाल सेठी, जोरावर सिंह एवं प्रतापसिंह के सहयोग से किया गया। 23 दिसम्बर सन् 1912 को दिल्ली में शाही हाथी की सवारी पर जाते हुए वायसराय लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका गया था, जिसमें केसरीसिंह के छोटे भाई जोरावर सिंह एवं प्रताप सिंह सम्मिलित थे। राष्ट्रीय स्तर पर सन् 1857 के विफल स्वातंत्र्य–समर के बाद स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए यह दूसरा प्रयास था, जिसका नेतृत्व केसरीसिंह बारहठ, ठा. गोपालसिंह आदि कर रहे थे। 21 फरवरी सन् 1914 को क्रांति का शंखनाद होना था, लेकिन गुप्तचरों को भनक लग गई। सैनिक विद्रोह एवं सशस्त्र क्रांति की तमाम तैयारियाँ विफल कर दी गईं और वे 31 मार्च को गिरफ्तार कर लिए गए। 6 अक्टूबर, 1919 को केसरीसिंह

बारहठ को बीस वर्ष के आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। उन्हें अंग्रेज सरकार ने एक 'बागी' के रूप में ही स्वीकार किया।

एक अविस्मरणीय क्षण – जोधपुर के आशानाड़ा स्टेशन पर दिल्ली षड़यंत्र केस के अन्तर्गत उनके पुत्र प्रतापसिंह को गिरफ्तार कर बरेली जेल में भयंकर शारीरिक यंत्रणा दी गई। उस नवयुवक को बेहद पीड़ित किया गया। इसी समय केसरीसिंह बारहठ ने बिहार के हजारीबाग जेल में आजीवन कैद काटते समय काल कोठरी में अन्नत्याग कर दिया, लगभग 30 दिन बीत चुके थे। प्रतापसिंह ने पिताश्री से मिलने की इच्छा प्रकट की और पिता–पुत्र की यह अंतिम भेंट हजारीबाग जेल में संपन्न हुई। जर्जर बागी पिता जेल के सींखचों में बंद और इधर बेड़ियों में कसा आहत प्रतापसिंह। 'वंदेमातरम्' के संबोधन के बाद सिर्फ आँसू–आँसू प्रतापसिंह सिसकते रहे।

इसी बीच जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट फीलिप लेण्ड ने आग्रह किया कि यदि रासबिहारी बोस, शचीन्द्र सान्याल और गोपाल सिंह खरवा के छिपने के ठिकाने बता दिए जाए तो प्रतापसिंह छोड़ा जा सकता है। केसरीसिंह का स्वाभिमान जाग उठा और बोले "तुम जैसे गुलाम ही झूठन के लिए पूँछ हिलाते हैं और बाद में तुम्हारी भाषा में बोलते हैं। केसरीसिंह का बेटा शेर की तरह दहाड़ सकता है, जीवन के लिए मिमिया नहीं सकता" और फिर बेटे की तरफ झुकते हुए बोले– "बेटे प्रताप! आजादी बिकती नहीं है, आजादी छीनी जाती है, अपहरण करने वाले से। आजादी मिलती नहीं हासिल की जाती है, संघर्ष से और हर संघर्ष की कीमत होती है, वह हमें चुकानी है, यह एक अनंत सिलसिला है। बेटे तुम्हारे दीर्घ जीवन की अब क्या कामना करूँ, कष्टपूर्ण यात्रा है, भारत माँ के लाडले बनो, प्रताप हो, प्रताप बनो।"

भेंट का यह क्रम जल्दी ही टूट गया और प्रताप ने बरेली जेल जाकर जबान काट ली, होंठ सीं लिए, और ब्रिटिश सरकार के रहनुमाओं ने उन्हें गोली मार दी। केसरीसिंह ने पुत्र शोक की निर्मम पीड़ा को सहज रूप में स्वीकार कर लिया। हजारीबाग जेल से मुक्त होने के बाद जब वे कोटा आए तब किसी ने उनसे पूछा तो उन्होंने धैर्यपूर्वक उत्तर दिया "यह मैं आपके मुँह से सुन रहा हूँ कि वह मर गया, हाँ देश की स्वतंत्रता के लिए वह शहीद हो गया, यह मेरे लिए संतोष का विषय है।"

केसरीसिंह बारहठ एक सजग क्रांतिकारी थे और बाद में गाँधीजी से प्रभावित होकर वर्धा भी जाना चाहते थे। एक पत्र के उत्तर में उन्होंने सेवाग्राम को पत्र में लिखा– "शेष जानकारी मेरे संबंध में पुरूषोत्तम दास टंडन और डॉ. भगवानदास केला से प्राप्त कर लें।" यह पत्र स्थापित करता है कि केसरीसिंह बारहठ राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए लड़े जा रहे आन्दोलन की महत्वपूर्ण कड़ी थे। जीवन का कुछ अंश 74 वर्ष की अवस्था में सेवाग्राम में बापू की देखभाल में बिताना चाहते थे, लेकिन 14 अगस्त 1941 को इस महान आत्मा की जीवनलीला समाप्त हो गई।

भारत के क्रांतिकारी जनतंत्रीय आंदोलन के इतिहास में स्व. ठाकुर केसरीसिंह बारहठ का नाम सदैव अंकित रहेगा। वे उत्कृष्ट कोटि के बुद्धिजीवी, विचारक, लेखक एवं कवि थे। वे राष्ट्रीय एकता, स्वतंत्रता और समता को सादर समर्पित थे। केसरीसिंह बारहठ राष्ट्र–भारती के चरणों में समर्पित वह पुष्प है, जिसकी सुगंध से आज राष्ट्र मंदिर सुवासित है। वे आत्मबलिदान और निःश्रेयस पूजा की साकार प्रतिमा हैं, उनकी स्मृति को प्रणाम।

अभ्यास के लिए प्रश्न

प्र. 1 'वंश भास्कर' ग्रंथ के रचयिता का नाम है–

(क) केसरी सिंह बारहठ (ख) जोरावर सिंह

(ग) प्रतापसिंह (घ) सूर्यमल्ल मिश्रण

प्र. 2 'राष्ट्र मंदिर का सुवासित पुष्प' किसे कहा गया है–

(क) दयानंद सरस्वती (ख) विवेकानंद

(ग) केसरी सिंह बारहठ (घ) सुभाषचंद बोस

प्र. 3 केसरीसिंह बारहठ का बाल्यकाल कहाँ व्यतीत हुआ–

(क) मेवाड़ में (ख) ढूंढाड़ में

(ग) हाड़ौती में (घ) मेवात में

प्र. 4 केसरीसिंह किसके समकालीन थे–

(क) दयानंद सरस्वती (ख) कबीरदास

(ग) तुलसीदास (घ) बिहारी

प्र. 5 केसरीसिंह बारहठ का अंतिम समय कहाँ व्यतीत हुआ?

प्र. 6 माणिक भवन किसकी स्मृति में बनाया गया?

प्र. 7 केसरीसिंह बारहठ सदैव किसके पक्षधर रहे हैं?

प्र. 8 उदयपुर महाराणा के स्वाभिमान को जगाने के लिए केसरीसिंह ने किस रचना का सृजन किया?

प्र. 9 केसरीसिंह को किस जेल में रखा गया?

प्र. 10 अभिनव भारत संगठन किनका था, इसमें कौन–कौन शामिल थे?

प्र. 11 प्रतापसिंह कौन थे, इन्हें गिरफ्तार क्यों किया गया?

प्र. 12 जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट फिलिप लेंड ने किस शर्त पर प्रतापसिंह को छोड़ने की बात कही?

प्र. 13 केसरीसिंह एवं प्रतापसिंह के बीच जेल में हुए संवाद को अपने शब्दों में लिखिए।

प्र. 14 स्वतंत्रता संग्राम में केसरीसिंह बारहठ के योगदान को विस्तारपूर्वक बताइए।

प्र. 15 केसरीसिंह के व्यक्तित्व पर विस्तार से प्रकाश डालिए।

आसपास –

01. यदि प्रतापसिंह की जगह आप होते तो क्या करते, कल्पना के आधार पर लिखिए।

02. 'आजादी बिकती नहीं आजादी छीनी जाती है' से केसरीसिंह का तात्पर्य क्या है।

कठिन शब्दार्थ

स्याह– काला / उद्भट– प्रकाण्ड/प्रसिद्ध / रहनुमा– दया करने वाला / बेड़ियाँ – लोहे की जंजीर जिससे कैदियों को बाँधा जाता है / दहाड़– हुंकार/जोर से चिल्लाना

/ कोर्निश– एक प्रकार का वाद्य यंत्र / जर्जर– क्षीण / हुतात्मा– बलिदानी

/ प्राण प्रसून– जीवन रूपी पुष्प / छत्र छाया– देखरेख में / ज्ञाता– विद्वान/जानने वाला

/ बागी– विद्रोही / यंत्रणा– यातना / सोरठा– पद रचना का एक छंद

/ रक्षक– रक्षा करने वाला / अभिव्यक्त– बताना/कहना/प्रस्तुत करना

/ आँख की किरकिरी बनना– रास्ते की रुकावट बनना या कार्य में बाधा बनना

/ शहीद– बलिदान होना/प्राण न्यौछावर करना / सुवासित– खुशबू से महकना

अध्याय–4
गाँधीजी

– बनारसीदास चतुर्वेदी

यह बतलाने की जरूरत नहीं कि महात्मा गाँधी अत्यंत परिश्रमी व्यक्ति थे। कभी–कभी तो वे रात के ढाई बजे उठ बैठते और दिन में घंटे आधे घंटे का विश्राम करके रात के दस बजे तक काम करते रहते । उनके सिर पर काम का इतना बोझ निरंतर बना रहता था और समस्त देश की चिंता उन्हें इतना व्यस्त रखती थी कि उनके लिए हँसना–हँसाना अत्यन्त आवश्यक हो गया था। एक बार किसी विलायती संवाददाता ने उनसे पूछा– ''गाँधीजी, क्या आप में हास्य की प्रवृत्ति भी है ?'' उन्होंने तुरंत जवाब दिया– ''यदि मुझमें हास्य की प्रवृत्ति न होती तो मैंने कभी का आत्मघात कर लिया होता।''

महात्मा जी का मजाक छोटे–बड़े सभी के साथ चलता था। मन–बहलाव के लिए खास तौर पर छोटे बच्चों के साथ खूब दिल्लगी करते थे। एक बार महात्मा जी ने आश्रम की सभी महिलाओं की मीटिंग अपने कमरे में की। बातचीत का विषय था– उनकी गोद ली गई अछूत कन्या को अपने चौके में बिठला कर रसोई बनाना कौन सिखाएगा। डेढ़ घंटे तक गंभीर वार्तालाप होता रहा। एकत्र स्त्रियों में से कोई भी इस पुण्य काम के लिए तैयार नहीं हुई। सबने एक स्वर में 'ना' कर दिया। स्नान कराने, सिर के बाल काढ़ देने इत्यादि छोटी–छोटी सेवा के लिए कई स्त्रियाँ तैयार हो गईं परन्तु अपने चौके में उस बालिका को घुसने देना किसी को स्वीकार नहीं था। वातावरण कुछ गंभीर–सा हो चला। महात्माजी ने उस समय मुस्कराकर इतना ही कहा– ''तब मुझे अभी लंबी लड़ाई लड़नी पड़ेगी।'' इसके बाद तुरंत ही उन्होंने छोटे–छोटे बच्चों पर, जो अपनी माताओं के साथ बापू के कमरे में चले आए थे, निगाह फेंकी। एक बच्चे के हाथ में उन्हें एक पैसा दीख पड़ा। बस बापू को मौका मिल गया। उन्होंने उससे कहा– ''अरे भाई पैसा मुझे दे दे।''

बालक ने कहा– ''मलाई बर्फ खाईंगे।''

बापू ने कहा– ''हमको तो मलाई की बर्फ मिलती नहीं।''

बालक ने कहा– ''हमारे घर चलो हम तुमे खूब खवावेंगे।''

इसके बाद बापू ने कुछ कहा, जिसमें ''शु'' गुजराती शब्द आया था, जिसके मानी है ''क्या।'' वह बच्चा ''शु'' समझ न सका और सब महिलाएँ हँस पड़ी। बापू भी हँस पड़े। दूसरे दिन जब उस लड़के के पिता ने बापू की सेवा में उपस्थित होकर माफी माँगी तो बापू ने हँसते हुए सिर्फ इतना ही कहा– ''अरे वह बच्चा तो मेरा पुराना दोस्त है।''

बापू की इस स्वाभाविक कोमलता के साथ–साथ कठोर नियंत्रणवृत्ति भी काम करती थी। बापू ने अन्य महिलाओं से तो कुछ नहीं कहा, पर अपने भतीजे मगनलाल गाँधी की धर्मपत्नी को हुक्म दिया–''आप अपने मायके चली जाएँ, पर बच्चों को यहीं छोड़ती जाएँ। मुझे ऐसी बहू नहीं चाहिए जो मेरी लड़की को चौके के भीतर न घुसने दे।'' श्री मगनलाल की धर्मपत्नी को अपने पिताजी के यहाँ जाना पड़ा और छः–सात महीने वहीं रहना पड़ा। यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि अंततः उन्होंने उस तथाकथित अछूत बालिका को रसोई में ले जाना स्वीकार कर लिया।

एक बार बापू की सवेरे की प्रार्थना में शामिल होने के लिए सवेरे पौने चार बजे मैं भी गया था। मेरे हाथ में एक हॉकी–स्टिक थी। उसे प्रार्थना स्थल के बाहर रखकर मैं बैठ गया। प्रार्थना समाप्त होने पर ज्यों ही मैंने हॉकी स्टिक अपने हाथ में ली बापू उधर से आ निकले। हँसकर कहा– ''ये लाठी आपने बड़ी मजबूत बाँधी है।'' मैंने उत्तर दिया– ''इसका नाम श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने 'मस्तक–भंजन' रख दिया है। बापू बाले– 'हाँ, और सत्याग्रह आश्रम में 'मस्तक–भंजन' रखनी ही चाहिए।'' आस–पास खड़े आदमी हँस पड़े।

एक बार महात्माजी ने मुझे सवेरे सात और सवा–सात के बीच का टाइम बातचीत के लिए दिया। मैं उन दिनों नया–नया आश्रम में गया था। मन में सोचा कि बापू कहीं जाते थोड़े ही हैं, दो–चार मिनट की देर भी हो जाए तो क्या ? सात बजकर दस–बारह मिनट पर पहुँचा। बापू मुस्कराकर बोले– ''तुम्हारा टाइम तो बीत गया। अब भाग जाओ। फिर कभी वक्त तय करके आना।'' मुझे बहुत लज्जित होना पड़ा।

एक बार फिर ऐसी ही दुर्घटना घट गई, परन्तु उसमें मेरा अपराध नहीं था। बापू ने एक राजा साहब को शाम को तीन बजे का टाइम दिया था और मेरे सुपुर्द का काम यह था कि मैं उनको लाऊँ। उन्हें अहमदाबाद से आना था, इसलिए बस एक मिनिट की देर हो गई। जब मैं राजा साहब को लेकर बापू की सेवा में पहुँचा तो वे बोले– ''मैं तो मिनट भर से आपका इन्तजार कर रहा हूँ।''

बापू चाय को स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक समझते थे पर जिन्हें चाय पीने की आदत पड़ गई थी, उनके लिए वे चाय का समुचित प्रबन्ध अवश्य कर देते थे। एक बार मिस आगेथा हैरिसन नामक एक अंग्रेज महिला उनके साथ यात्रा पर आ रही थी और उन्हें इस बात की चिंता थी कि उनकी प्रातःकालीन चाय का इन्तजाम कैसे हो सकेगा। महात्मा जी को जब यह पता लगा तो वे बोले– ''आप फिक्र ना कीजिए। मैंने आपके लिए आधा–पौंड जहर रख लिया है।''

एक बार मेरे साथ भी बापू ने चाय के बारे में कई मजाक किए। कलकत्ते से चल कर वर्धा उनकी सेवा में उपस्थित हुआ था। रात के साढ़े आठ से नौ बजे तक का टाइम मुझे दिया था। ठीक वक्त पर पहुँचा। आधे घंटे बातचीत होती रही। चलते वक्त बापू ने कहा– ''खूब आराम से चाय पीना।'' मैंने कहा– ''बापू क्या आपको मेरे चाय पीने का पता लग गया है ?'' उन्होंने कहा– ''हाँ, काका साहब

ने मुझे बतला दिया है कि तुम कलकत्ते में चाय पीने लग गए हो।''

मुझे भी उस वक्त मजाक सूझा। मैंने कहा ''बापू, आप मि.एंड्रूज को छोटा भाई मानते हैं ?''

उन्होंने कहा– ''हाँ।''

''और वे आपको बड़ा भाई मानते हैं।''

बापू ने कहा– ''हाँ।''

मैंने तुरंत ही कहा– ''तो मैं बड़े भाई की बात न मानकर छोटे भाई की बात मानता हूँ।''

बापू हँसकर बाले– ''तब तो मैं एन्ड्रूज को लिख दूँगा कि तुमको अच्छा शिष्य मिल गया है।''

फिर बापू ने गंभीरतापूर्वक कहा– ''रात के ढाई बजे से उठा हुआ हूँ और अब नौ बज रहे हैं, दिन में बस बीस मिनट आराम मिला है।''

मैं चकित रह गया। अठारह घंटे मेहनत करने के बाद भी बापू कितने सजीव थे, मानो वे हमारी काहिली का प्रायश्चित कर रहे थे।

संध्या समय जब महात्माजी डच–गायना प्रवासी भारतीयों के लिए संदेश लिखाने बैठे तो मैंने अपनी जेब से फाउन्टेन पैन निकाला। तुरन्त ही बापू ने कहा– ''कब से फाउन्टेन पैन से लिखते हो?''

मैंने कहा– ''कई साल हो गए।''

''कितने साल?''

मैंने कहा– ''ठीक–ठीक नहीं बतला सकता।''

तब बापू ने कहा– ''दक्षिण अफ्रीका में मेरे पास फाउन्टेन पैन था, परन्तु अब तो कलम से लिखता हूँ। डच–गायना वाले भी क्या कहेंगे कि इनके पास घर की कलम भी नहीं।''

तुरन्त चाकू और कलम मँगाई गई, परन्तु मैं जिस कागज पर लिखने चला था, वह था बढ़िया बैंक पेपर। बापू ने कहा– ''यह बढ़िया कागज हम लोगों को कहाँ मिल सकता है? यह तो तुम्हारे ऑफिसवालों को ही मिलता है, जहाँ चाय भी मिलती है। हम तो कोरा पानी पीने वाले गरीब आदमी ठहरे।''

मैं लज्जित हो गया। फिर बापू गम्भीर होकर बोले– ''मेरा संदेश स्वदेशी कागज पर लिखो। आज तो हम लोगों ने आश्रम में कार्ड और लिफाफे भी बनवाए हैं।'' हाथ का बना कागज लाया गया और मैंने नेजे की कलम से और घर की स्याही में बापू का संदेश लिखा।

बापू अपने अधीनस्थों को पूरी–पूरी स्वाधीनता देते थे और वे भी उनसे मजाक करने में न चूकते थे। मैं भी यह धृष्टता कर बैठता था। जब श्री पद्मजा नायडू के लिए 'कॉफी' का सब सामान लाया गया तो बापू ने हँसकर कहा– ''यह सब साज सामान है।''

मैंने कहा– ''देखिए बापू, मेरी वोट बढ़ रही है।''

''कैसे?''

मैंने कहा– ''महादेव भाई चाय पीते हैं, बा कॉफी पीती हैं और पद्मजाजी भी कॉफी पीती हैं और मैं चाय। चार वोट हो गई।''

बापू ने तुरंत उत्तर दिया– ''बुरी चीजों के प्रचार के लिए वोट की जरूरत थोड़े ही पड़ती है, वे तो अपने आप फैलती हैं।''

बापू मजाक में पीछे रहने वाले आदमी नहीं थे। वे बड़े हाजिर–जवाब थे।

एक बार विद्यापीठ के प्रिंसिपल कृपलानीजी बोले– ''जब तक हम लोग आपसे दूर रहते हैं, हमारी अक्ल ठीक रहती है, परन्तु आपके पास आते ही खराब हो जाती है।''

बापू हँसकर बोले– ''तब तो मैं आपकी खराब अक्ल का जिम्मेदार ठहरा।''

खूब हँसी हुई। कलकत्ते में मुझे बापू ने बीस मिनट का टाइम दिया था– सवेरे पौने चार बजे का। अकेले जाने के बजाय मैं 16–17 आदमियों के साथ गया। जब जीने पर चढने लगा, तब महादेव भाई नाराज भी हुए, बोले– ''आप तो आश्रम में रह चुके हैं। यह क्या बे–नियम कार्यवाही करते हैं ?'' परन्तु महात्माजी ने इतना ही कहा– ''तुम तो फौज की फौज ले आये।''

मैंने कहा– ''क्या करता, ये लोग माने ही नहीं, मैंने इन्हें वचन दे रखा था कि बापू के दर्शन निकट से कराऊँगा।''

बीस मिनट तक वार्तालाप होता रहा। जब प्रार्थना के लिए बापू उठे, तो मैंने कहा– ''बापू, मैं तो मासिक पत्र में आपके खिलाफ बहुत लिखा करता हूँ।''

बापू ने कहा– ''सो तो ठीक है, पर कोई सुनता भी है ?'' सब हँस पड़े।

मुनि श्री जिनविजय ने बापू का एक किस्सा सुनाया था। बापू पहले मोटर से बाहर निकले, परन्तु थोड़ी दूर चलकर कोने में अपनी मोटर खड़ी कर ली। इसके दो मिनट बाद ही पण्डित मोतीलाल जी नेहरू और मुनिजी की मोटर निकली। मोतीलाल जी ने मुनि से कहा– ''देखा आपने ? महात्माजी ने मेरे ख्याल से अपनी मोटर रोक रखी है। चलकर उनसे कारण पूछें।'' पण्डितजी ने जब पूछा तो महात्माजी बोले– ''मैं यह नहीं चाहता था कि आपको धूल फाँकनी पड़े। मैं तो आपको ज्यादा दिन जिन्दा देखना चाहता हूँ।''

महात्माजी के मजाक, हाजिर–जवाबी और उनकी जागरूकता के सैंकड़ों किस्से हैं, जो उनके भक्तों को समय–समय पर याद आते रहते हैं। साथ ही अपनी धृष्टता का खयाल करके लज्जा का बोध भी होता है। ऐसे अवतारी महापुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम के साथ किसी भी प्रकार का मजाक हिमाकत तो था ही, परन्तु वे अत्यंत क्षमाशील थे और सबको पूर्ण स्वाधीनता देने के पक्षपाती। उनकी पावन स्मृति में सहस्रों बार प्रणाम!

अभ्यास के लिए प्रश्न

प्र. 1 गुजराती में 'शु' का अर्थ होता है –

(क) कौन (ख) कब (च) क्या

(ग) क्यों (घ) किसे ?

प्र. 2 माखनलाल चतुर्वेदी ने 'मस्तक–भंजन' किसे कहा है –

(क) लाठी (ख) हॉकी स्टिक (च) पत्थर

(ग) क्रिकेट बॉल (घ) हथौड़ा

प्र. 3 विलायती संवाददाता के प्रश्न का गाँधीजी ने क्या जवाब दिया?

प्र. 4 बापू की स्वाभाविक कोमलता के साथ–साथ कौन सी वृत्ति काम करती थी?

प्र. 5 लेखक को गाँधीजी के समक्ष लज्जित क्यों होना पड़ा?

प्र. 6 गाँधीजी के संस्मरणों के आधार पर बतलाइए कि जीवन में हास्य की प्रवृत्ति का क्या महत्व है?

प्र. 7 समय की नियमितता के सम्बन्ध में गाँधीजी का क्या दृष्टिकोण था? उदाहरण सहित उत्तर दीजिए।

प्र. 8 'विनोद के समय भी गाँधी जी अपनी जागरूकता एवं हाजिर–जवाबी में पारंगत थे' ? पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

प्र. 9 निम्नलिखित विषयों पर गांधीजी की दृष्टि से टिप्पणियाँ लिखिए –

(क) छूआ–छूत (ख) चाय–काफी

(ग) स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग (घ) अस्त्र–शस्त्र

शब्दार्थ

विलायती – विदेशी / प्रवृत्ति – आदत / दिल्लगी – मजाक/हँसी ठिठोली / आत्मघात – स्वयं को नुकसान पहुँचाना / अधीनस्थ – किसी के अधीन कार्य करने वाला / निगाह – नजर डालना/देखना / आश्रम – रहने का स्थान / शु' – क्या (गुजराती शब्द) / बाल काढ़ना – केश सँवारना / धृष्टता – दुस्साहस / सुपुर्द – सौंपना

/ मस्तक भंजन – सिर फोड़ना / हिमाकत – मूर्खता/अविवेक / सहस्रों – हजारों

/ खिलाफ – विरोध में / पौंड – एक मुद्रा, वजन मापने की इकाई / प्रवासी – प्रवास करने वाला / धूल फाँकना (मु) – व्यर्थ घूमना / हाजिर जवाब – तुरन्त जबाब देने वाला

/ लज्जित होना – शर्मिन्दा होना / काहिली – आलसीपन

अध्याय–5
विष पिया, अमृत दिया

– हितेश शंकर

एक बिंदु, परिपूर्ण सिन्धु,
है ये मेरा हिन्दू समाज।
मैं तो समष्टि के लिए व्यष्टि का,
कर सकता बलिदान अभय।।

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी की ये पंक्तियाँ डॉ. भीमराव अंबेडकर के व्यक्तित्व के लिए एकदम खरी बैठती हैं। कुछ लोग पहली बार में उखड़ सकते हैं। आपत्ति जता सकते हैं। विवाद खड़ा करने का प्रयास भी कर सकते हैं। परन्तु ठहरिए, डॉ. अंबेडकर का जीवन इसी उखाड़–पछाड़, आपत्ति–अनापत्ति, विवाद–संवाद में सीझा हुआ जीवन है। डॉ. अंबेडकर का जीवन सरस–समतल–सपाट नहीं है। यह बार–बार अपमान की चिनगारियों पर तपता है और जगह–जगह सम्मान के छींटों से शांत होता ऐसा विराट व्यक्तित्व है, जिसकी दृढ़ता विपरीत अनुभवों को सहते–समझते हुए कदम–दर–कदम बढ़ती जाती है। अंबेडकर को यह मजबूती तत्कालीन परिस्थितियों ने दी है। खुद उस समाज ने दी है, जिसका हिस्सा बाबासाहेब थे।

इस दृढ़ता का विलक्षण पक्ष यह है कि अंबेडकर चोट खाते हैं और हर चोट के साथ सामाजिक मजबूती के काम में और अधिक जोश–खरोश से जुट जाते हैं। समाज की व्यवस्थागत गलन और गंदगी पर बड़बड़ाते हैं लेकिन जहाँ इस राष्ट्र और समाज की अखंडता पर कोई हमला होता है, डॉ. अंबेडकर बाबासाहेब बन जाते हैं। इस समाज के अनुभवी बुजुर्ग की तरह व्यवहार करते हैं। एकरस समाज और मजबूत राष्ट्र के प्रबल पक्षधर हो जाते हैं। उनका 'कवच' बनकर खड़े हो जाते हैं।

बालक भीम का डॉ. अंबेडकर होने से लेकर बाबासाहेब रूपी राष्ट्ररक्षक कवच में ढलना ऐसी परिघटना है, जो सबके जीवन में नहीं घटती। यदि घटती है तो उस यंत्रणा को झेलना सबके बस की बात नहीं। इस महामानव के जीवन की छोटी–छोटी घटनाओं को तत्कालीन परिस्थितियों के संदर्भ में और खुद बाबासाहेब की नजर से देखना जरूरी है।

छोटे–से बच्चे का अन्य बच्चों के साथ खेलने के लिए मचलना और विवशता से भरी माँ द्वारा उसे यह कहकर गोद में उठा लेना कि सूबेदार मेजर का बेटा होने के साथ तू महार भी है, बालमन पर कैसी चोट लगी होगी! बंधनों में जकड़े बचपन की इस छटपटाहट और आँसुओं में डूबे इस सबक को बच्चे की नजर से समझना होगा। बच्चे तो बच्चे हैं, बालकों में फर्क होता है क्या? यह जीवन का पहला झटका, पहला सवाल है, जो भीम के मन में उथल–पुथल मचाता है। और उसे इस नन्ही उम्र में प्रश्नों की बजाय उत्तर खोजने की तरफ मोड़ देता है।

अन्य छात्रों–शिक्षकों के जूतों के पास बैठकर पढ़ने की शर्त पर विद्यालय में दाखिला मिलना, पिता अपमान और ग्लानि से भरे हैं, माँ की आँखों में आँसू हैं, किन्तु छह वर्ष का बच्चा कहता है– 'माँ मेरा दाखिला करा दो, मैं जूतों के पास बैठकर पढ़ लूँगा।' बच्चों में फर्क देखने वाले तथाकथित बड़े लोगों के समाज को भीम का यह पहला उत्तर है।

माँ भीमाबाई स्थिति को समझती हैं और उसकी आँखें अपने नन्हें बेटे की असीम संभावनाओं को पहचानती भी हैं। वह कहती हैं, 'बेटा तुम्हें समाज में बहुत अपमान सहना पड़ेगा, बड़ी घृणा झेलनी पड़ेगी। इस सबकी परवाह न करना। तुम्हें पढ़ना है। बिना पढ़े कोई बड़ा आदमी नहीं बन सकता। जब तुम बड़े आदमी बन जाओ, तब समाज की इस गंदी रीत को बदल डालना, यही मेरी इच्छा है।'

माँ का सपना भीम के मन का संकल्प बनता है। घर से अपनी अलग टाट–पट्टी साथ ले जाना। जूतों के बीच, दहलीज पर बैठकर पढ़ना। आधी छुट्टी में दीवार की ओर मुँह करके पेट भरना... उलाहनों को पीते, विषमताओं में जीते हुए लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित किए भीम का समाज को दूसरा उत्तर है– परिस्थिति से ज्यादा महत्त्वपूर्ण है परिणाम।

जिस माँ की आँखों में अपने भीम को पढ़ाने और बड़ा आदमी बनते देखने का सपना था, उस माँ को इस कारण रोग से प्राण छोड़ते देखना कि तथाकथित के घर श्रेष्ठ वैद्य आने को तैयार नहीं, दिल बैठने लगता है। आँसू सूख जाते हैं, भूख मर जाती है, बच्चे के लिए मानो पूरी दुनिया ही निष्प्राण हो जाती है। मगर वह फिर खड़ा होता है। यह भीम की जिजीविषा है। उसने मन ही मन संकल्प किया होगा कि निम्न और कुलीन के अन्यायपूर्ण प्रश्नों में झूलते समाज को उत्तर देना ही होगा। बैठने से काम नहीं चलेगा। माँ जिस रोग से गई उससे बड़ा रोग समाज को लगा है। मैं समाज के रोग का इलाज करूँगा, अंबेडकर का यह मूक प्रण सामाजिक निष्ठुरताओं को उनका तीसरा उत्तर है।

अंबेडकर बड़े हैं तो बाधाएँ पार करने के कारण। बाबासाहेब का व्यक्तित्व विराट है तो इस कारण कि कदम–कदम पर अपमान का विष पीने के बाद भी उनके मन में घृणा नहीं उपजी। ऐसा नहीं है कि अंबेडकर को क्रोध नहीं आता। वे परिस्थितियों पर झुँझलाते हैं, मुट्ठियाँ भींचते हैं, अकेले में रोते हैं, जाति की छोटी–बड़ी जंजीरों को तोड़ना चाहते हैं। जो गलत करता है उसे खुलकर फटकारते भी हैं। लेकिन इन सभी मानवीय गुणों के साथ वे विलक्षण हैं तो इसलिए कि वे कभी भी अपनी सदाशयता नहीं छोड़ते। शब्द कैसे भी हों, उनका आशय सदा अच्छा बना रहता है। जिन्होंने अच्छा किया, अंबेडकर उनकी अच्छाई नहीं भूलते।

रामजी सकपाल के पुत्र का नाम भीम है। उपनाम सकपाल है। किन्तु प्राथमिक शाला के जिन ब्राह्मण मुख्याध्यापक ने भीम के लिए सबसे पहले शिक्षा मंदिर के दरवाजे खोले, इस छात्र की अनुपम

मेधा को पहचाना, प्यार से अपना उपनाम दिया, बाबासाहेब ने उस ब्राह्मण उपनाम अंबेडकर को अंत तक अपने हृदय से लगाए रखा। बड़ोदा नरेश महाराज गायकवाड़ का पूरा सहयोग इस मेधावी छात्र को मिला। उच्च शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति मिली, रियासत को सेवा देते हुए लेफ्टिनेंट का ओहदा मिला। मगर जब मृत्यु शैया पर पड़े पिता की सेवा के लिए छुट्टी न देने वाले अधिकारी का कड़वा व्यवहार मिलता है तो अंबेडकर महाराज से गुहार नहीं लगाते। संबंधों का लाभ नहीं उठाते। कोई कटुता नहीं पालते। वे पिता की सेवा के लिए रियासत की रौबदार नौकरी सहज ही छोड़ देते हैं। मान–अपमान की लड़ाई की बजाय वे अनुशासन और भारतीय संस्कार की लीक पकड़ते हैं। बाद में महाराज गायकवाड़ से मुलाकात होती है परंतु दोनों ओर से वही सजगता, वही सहयोग और सम्मान मिलता है। विषम परिस्थितियों से जूझने के बाद भी चीजों को बिगड़ने न देना यह डॉ. अंबेडकर की विशेषता है। सोचिए, जो लोग बाबासाहेब के वर्ग हितैषी, सवर्ण शत्रु और विद्रोही व्यक्तित्व का चित्र खींचते हैं, उनका चित्र कितना अधूरा है।

कुछ लोग डॉ. अंबेडकर को सिर्फ तत्कालीन तथाकथित वर्ग का क्रांतिकारी नेता सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। यह बाबासाहेब की विराट सर्व समावेशी दृष्टि को संकीर्ण दायरे में बाँधने का असफल प्रयास है। यह उस व्यक्ति के साथ सरासर अन्याय है, जिसने सामाजिक विषमताओं का दंश झेलने के बावजूद इस समाज की सामूहिक शक्ति को पहचाना और राष्ट्रहित में सबसे एक रहने का आह्वान किया। सबसे पहले देश, अंबेडकर की सोच यही है। यहाँ जाति, वर्ग और पंथों के विभाजन की नहीं, एकात्म की कल्पना है। देश की एकता और स्वतंत्रता के लिए छोटी–बड़ी जातियों में बँटे वर्गों को एकजुट होना चाहिए और मजहब, पंथ, जाति ये देश से बड़े नहीं हो सकते, यह बाबासाहेब का स्पष्ट मत था। यह विचार डॉक्टर अंबेडकर ने सन् 1949 के अंत में एक भाषण में सामने रखा था। भाषण का शीर्षक था– ''देश को समुदाय से ऊपर रखना चाहिए। सामाजिक कटुता बाँटती है और नुकसान पूरे देश, पूरे समाज का होता है'' यह बात अंबेडकर ने अपमान के घूँट पीने के बाद भी कैसे मन में बैठाई होगी! क्या यह आसान था?

1917 में कोलंबिया विश्वविद्यालय से पढ़कर लौटे डॉ. अंबेडकर को महाराज गायकवाड़ तो सैन्य सचिव का ऊँचा ओहदा देते हैं लेकिन जातिगत श्रेष्ठता के झूठे बंधनों को ढोते उनके अमलदारों में से कोई बाबासाहेब को लेने रेल्वे–स्टेशन तक नहीं पहुँचता। उच्च जाति का चपरासी, सैन्य सचिव को फाइलें पकड़ाता नहीं, दूर से पटकता है। इस अधिकारी के पानी माँगने पर मातहत साफ–साफ मना कर देते हैं! कोई घर देने को तैयार नहीं, पहचान छिपाकर कमरा ले भी लिया तो सामान सड़क पर पटक दिया जाता है। दिल में दर्द उमड़ता है, आँखों में आँसू आते हैं किन्तु अंबेडकर का बड़प्पन कि वे ऐसी तुच्छताओं को अपनी क्षमा की चादर से ढक देते हैं। यही अंबेडकर नवंबर 1918 में बंबई (अब मुम्बई) के सिडनहम कॉलेज ऑफ कॉमर्स एंड इकोनॉमिक्स में राजनीति और अर्थशास्त्र के शिक्षक होकर आते हैं तो एक रोज प्यास से गला सूखने पर घड़ा छूते भर हैं कि बवाल हो जाता है।

मेधा, शिक्षा, डिग्री सब व्यर्थ! क्या सनातनी कस्बे, क्या पारसी धर्मशाला, क्या ईसाई कॉलेज? सब जगह सोच का वही छोटापन, वही विष! यह महामानव हर कदम पर हलाहल पीता है मगर अपने भीतर किसी के लिए कोई जहर नहीं पालता।

उपर्युक्त घटनाओं के संग–संग कालान्तर में अंबेडकर की प्रतिक्रियाओं के रूप में सामने आता

उनका व्यक्तित्व स्वतः अपना स्थान बनाता है। किंतु इन सबके साथ 25 नवंबर, 1949 को भीमराव अंबेडकर का एक भाषण तुलनात्मक संदर्भ के तौर पर जरूर पढ़ा जाना चाहिए। यह भाषण बाबासाहेब की सांस्कृतिक चेतना का दस्तावेज तो है ही, यह भी दिखाता है कि तुच्छ व्यवहार ने बाबसाहेब को आहत जरूर किया था, परंतु उनकी समझ को कुंठित करने में असफल रहा था। इस रोज संविधान सभा के जरिए डॉ. अंबेडकर ने देश को झकझोरा था। वह आह्वान, वह चेतावनी आज भी पूरी तरह प्रासंगिक है। इस भाषण में देश के सांस्कृतिक अतीत और इस पर आक्रमणों का पूरा लेखा उन्होंने देश के सामने रखा था। अंबेडकर ने याद दिलाया कि जब मुहम्मद–बिन–कासिम भारत पर आक्रमण के लिए उत्तर–पश्चिम की सीमा पर आया, तब राजा दाहिर ने मुकाबला करने का निर्णय लिया। किंतु दुर्भाग्य से राजा दाहिर पराजित हुए और मुहम्मद बिन कासिम जीत गया। वीर होने के बाद भी दाहिरसेन की हार हुई क्योंकि उनका सेनापति देशद्रोही निकला।

उस महामानव के जीवन की घटनाओं, घटनाओं की प्रतिक्रियाओं और इस सबसे पककर निकली सोच को सामने रखती ये कुछ झलकियाँ भर हैं। वास्तव में तो डॉ. अंबेडकर का सारा जीवन समाज के कटुतम प्रश्नों का सरलतम और सटीक उत्तर है।

मनोवैज्ञानिक तौर पर 'जैसे को तैसा' यह सहज मानवीय व्यवहार है लेकिन डॉ. अंबेडकर ने, कोई कैसा है के सामने किसी व्यक्ति और व्यवस्था को कैसा होना चाहिए, यह उदाहरण और व्याख्याएँ सामने रखते हुए आम मनोवैज्ञानिक धारणाएँ झुठला दी थीं। वे जुझारू थे, दबते नहीं थे, इसलिए उन्होंने 'अखिल भारतीय शेड्यूल कास्ट फेडरेशन' बनाई थी। यह रणनीतिक फैसला था। उनका साफ मानना था कि अस्पृश्यता और अन्याय के विरूद्ध लड़ना है तो यह घर के भीतर की बात है और यह लड़ाई बाकी हिन्दू समाज से कटे रहकर नहीं लड़ी जा सकती और न ही दलितों को हाशिए पर पड़े रहने देना इसका इलाज है। प्रसिद्ध कामगार मैदान सभा में उन्होंने कहा था कि इच्छा से हो या अनिच्छा से, दलित वर्ग हिंदू समाज का ही अंग है। हमने महाड और नासिक में जो सत्याग्रह संघर्ष किया, वह हिंदुओं पर इस बात का दबाव डालने के लिए ही था कि वे दलितों को बराबरी के स्तर पर स्वीकार करें।

उनकी व्यवस्थावादी सोच में अस्पष्टता नहीं थी। न्याय व्यवस्था के बारे में राष्ट्रीय स्तर पर मतैक्य स्थापित करना यह उनकी चाह थी। भले ही स्वयं उन्होंने कुछ भी झेला हो लेकिन इसके बाद भी समाज से अन्याय को दूर करने के लिए सबको सहमति तक पहुँचाने का प्रयास करते रहना, निरंतर जूझना, यही उनके जीवन का ध्येय था।

अंबेडकर यकीनन बड़े हैं, लेकिन वे बड़े हैं बड़ी बाधाएँ पार करने के कारण। बाबा साहेब का व्यक्तित्व विराट है तो इस कारण कि कदम–कदम पर अपमान का विष पीने के बाद भी इस व्यक्ति के मन में घृणा नहीं उपजती। कुछ लोग बाबासाहेब के जीवन को सिर्फ कुछ लोगों की चिंता और अन्य से नफरत का पुलिंदा बनाकर पेश करते हैं। ऐसे प्रयास अपने आप में घृणित हैं, क्योंकि यह एक बड़े व्यक्ति को बौना साबित करने की कोशिश है। चिंदियों को तस्वीर की तरह दिखाना उस विराट चित्र का अपमान है, जिसमें इस संपूर्ण राष्ट्र, इसकी चुनौतियों और अपने सहोदर समाज की परिस्थितियों का स्पंदन है। समझने वाली बात यह है कि डॉ. अंबेडकर के जीवन में समाजिक उठापटक और उलझाव तो खूब है, लेकिन दुराव नहीं है। यदि डॉ. अंबेडकर तत्कालीन भारतीय समाज की बुराइयों को काटने वाली तलवार की तरह तीखे हैं तो इस समाज की साझा शक्ति को बचाने वाली ढाल भी हैं।

भारतीय संस्कृति में तप बड़ी चीज है। व्यक्ति को शक्ति और तेज देने वाली तपस्या की राह कभी आसान नहीं होती। अंबेडकर का जीवन सरलताओं का सुगम पथ नहीं है। यह विपरीतताओं के काँटों और अपमान के अंगारों पर चलकर उन्हें कुचलकर तय की गई एक दुर्गम यात्रा है। भौगोलिक एवं सामाजिक अखंडता को समाज का अभिन्न अंग और समाज हित को सर्वोपरि मानते हुए खुद को गला देना कम बड़ी बात नहीं। यह तपस्या है। व्यष्टि यानी व्यक्ति समष्टि यानी संपूर्ण समाज के लिए कैसे अपना जीवन होम कर सकता है, इस बात की झाँकी है डॉ. अंबेडकर का तपमय जीवन।

अभ्यास के लिए प्रश्न

प्र. 1 डॉ. अंबेडकर ने महाराजा गायकवाड़ की नौकरी क्यों छोड़ी –

(क) अध्ययन हेतु (ख) माताजी की सेवा हेतु

(ग) पिताजी की सेवा हेतु (घ) राजनीति में आने हेतु

प्र. 2 डॉ. अंबेडकर के लिए सबसे पहले क्या था –

(क) जाति (ख) स्वयं

(ग) देश (घ) समाज

प्र. 3 बालक भीम को अंबेडकर उपनाम किससे मिला –

(क) पिताजी से (ख) माताजी से

(ग) शिक्षक से (घ) महाराजा गायकवाड़ से

प्र. 4 डॉ. अंबेडकर के पिताजी का नाम था –

(क) रामजी सकपाल (ख) सकजी रामपाल

(ग) पालजी सकराम (घ) रावजी भीमपाल

प्र. 5 बालक भीम को विद्यालय में प्रवेश किस शर्त पर मिला ?

प्र. 6 डॉ. अंबेडकर को मजबूती किसने प्रदान की ?

प्र. 7 लेखक के अनुसार डॉ. अंबेडकर के बड़े आदमी होने का कारण क्या था ?

प्र. 8 लेखक के अनुसार डॉ. अंबेडकर ने जीवन भर किससे लड़ाई लड़ी ?

प्र. 9 समाज को डॉ. अंबेडकर का पहला उत्तर क्या था ? पाठ के आधार पर बताइए।

प्र. 10 किस घटना ने बालक भीम के मन में उथल–पुथल मचा दी ?

प्र. 11 माँ भीमाबाई ने बालक भीम को क्या–क्या शिक्षा दी ? विस्तार से समझाइए।

प्र. 12 उच्च पद की नौकरी करने के बाद भी डॉ. अंबेडकर को किन–किन परेशानियों का सामना

करना पड़ा ?

प्र. 13 बालक भीम का बचपन जिन विषम परिस्थितियों में बीता, उनका उल्लेख कीजिए।

प्र. 14 लेखक के अनुसार डॉ. अंबेडकर ने अपने आचरण एवं व्यवहार से समाज को क्या–क्या उत्तर दिए ? समझाइए।

पाठ के आसपास

परस्पर समानता एवं समरसता की आवश्यकता एवं उपादेयता पर अपने शिक्षक के निर्देशन में समूह चर्चा कीजिए।

शब्दार्थ

विष – जहर / सीझा– पका हुआ / विराट– बड़ा

/ तत्कालीन– उस समय का/की / बुजुर्ग– बूढ़े/घर के सबसे बड़े

/ कवच– सुरक्षा हेतु धारण किया जाने वाला आवरण/बख्तर

/ मचलना– जिद्द करना / दाखिला– प्रवेश / रीत– परम्परा

/ सबक– सीख / उलाहना– शिकायत / निष्प्राण– बिना प्राण के

/ जिजीविषा– जीने की इच्छा / कुलीन वर्ग– उच्च वर्ग / निष्ठुरता– कठोरता

/ विलक्षण– अद्भुत / मेधावी– बुद्धिमान / गुहार– प्रार्थना

/ हितैषी– भला चाहने वाला/शुभचिंतक / धूर्त– चालाक

/ ओहदा– पद / अमलदार– सेवाकर्मी

/ तुच्छ– हीन, क्षुद्र, नाचीज / आहत– दुःखी / सटीक– सही

/ मतैक्य– विभिन्न मतों में एकता / चिंदियां– कागज के छोटे–छोटे टुकड़े

/ दुर्गम– कठिन / होम देना– न्यौछावर करना

अध्याय–6

पृथ्वीराज की आँखें

– डॉ. रामकुमार वर्मा

{महाकवि चंद ने अपने ग्रंथ पृथ्वीराज रासो के छियासठ समयो (बड़ी लड़ाई समयो) में पृथ्वीराज का कैद होकर गोर जाना लिखा है। सड़सठवें समयो (बाणबेधसमयो) में पृथ्वीराज की धनुर्विद्या का वर्णन और अंत में पृथ्वीराज के शब्द बेधी बाण से शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी का वध होना लिखा है। इसी दृष्टिकोण को सामने रखकर इस नाटक की रचना की गई है}

<u>पात्र–परिचय</u>

पृथ्वीराज चौहान	– दिल्ली और अजमेर का राजा
चंद	– महाकवि और पृथ्वीराज का मित्र
शहाबुद्दीन गोरी	– गोर का सुल्तान (1192)
अख्तर	– सिपाही
काल	– तराइन के युद्ध के उपरान्त

(संध्या का समय। गोर के किले में पृथ्वीराज कैद है। वह पैंतालीस वर्ष का प्रौढ़ व्यक्ति है। उसके शरीर से शौर्य अब भी फूट रहा है। चढ़ी हुई मूँछें अैर रोबीला चेहरा। उसके हाथ साँकलों से बँधे हैं। अब वह घुटनों पर दोनों हाथ झुकाये बैठा है। साँकल का एक छोर उसके पैरों तक लटक रहा है, जो हाथों के संचालन मात्र से ही झूलकर शब्द करने लगता है। उसके बाल बिखरे हुए हैं। दाढ़ी बढ़ आई है। वस्त्र बहुत मैले हो गये हैं। कहीं–कहीं जलने के निशान भी पड़ गये हैं। घुटनों के पास फटा हुआ चूड़ीदार पाजामा है, जिस पर रक्त के धब्बे दिखाई पड़ रहे हैं, पैर में पुराना जूता है। पानी बरस चुका है, इसलिए वायु में कुछ शीतलता आ गई है।

दाहिनी ओर महाकवि चंद बैठा हुआ है। उसकी आयु पृथ्वीराज की आयु के लगभग है। उसके कपड़े साफ सुथरे हैं। वेश में सादगी है, पर मुख पर दुःख की रेखाएँ अंकित हैं। वह पृथ्वीराज को

करुणापूर्ण आँखों से देख रहा है। कुछ क्षणों तक दोनों स्थिर बैठे रहते हैं। बोलते हैं तो बोलने के साथ–साथ हिलने से साँकल बज उठती है।)

पृथ्वीराज–मत पूछो। कुछ मत पूछो। जिस क्षण ने पृथ्वीराज को पृथ्वीराज न रहने दिया, उसकी–उस निर्दय क्षण की बात मत पूछो। बड़ी कठिनाई से उस कष्ट को भुला सका हूँ चन्द! आखेट करते समय व्याघ्र के पंजे भी मुझे इस तीक्ष्णता से नहीं लगे। आह!

(सिर झुकाकर सोचता है)

चंद–(दयार्द्र होकर) महाराज, यह आपका शरीर, जिससे शौर्य पसीना बन कर बहा करता था, आज इतना निस्तेज है। क्या गोर के आदमी इतने निर्दय होते हैं? एक शक्तिशाली राजा के साथ इतना पशुत्व।

पृथ्वीराज–पशुत्व ? ओह चंद! यदि उस समय तुम होते तो काँप जाते। तुम्हारी लेखनी कुंठित हो जाती, मनुष्यता थर्रा उठती। आश्चर्य है, धरती माता यह सब कृत्य कैसे देखती रही। और इस पृथ्वीराज के शरीर पर इतना अत्याचार देख लेने पर भी वह माता कहला सकती है? कवि, घोषणा कर दो कि यह माता नहीं पिशाचिनी है।

(भावोन्मेष में काँपता है।)

चंद–महाराज!

पृथ्वीराज–(उसी भावावेश में) और यह हवा? इस समय शरीर से लगकर सुख देना चाहती है?

(घृणा प्रदर्शन)

चंद–यह उन्माद?

पृथ्वीराज–(तीव्रता से) चुप रहो, चंद! इतना सहने के बाद भी मैं जीवित हूँ, आश्चर्य है। भयंकर रात थी। प्रेयसी संयोगिता के बिना वह रात हब्शिनी बन गयी थी। अंधकार जैसे मेरी ओर घूर रहा था, मेरी आँखों में घुसकर। इतने में चार मशालें दिखलाई दीं। उनकी लौ इधर उधर झूम रही थी। जैसे अंधकार रूपी दैत्य की जिह्वाएँ हों। (सोचते हुए) पाँच आदमी सामने आये। चार मशालची और एक उनका सरदार। सरदार के हाथ में एक छुरा था। वह बोला कैदी, तेरी आँखें निकाली जायेंगी।

(शैथिल्य प्रदर्शन)

चंद–यह धृष्टता? (भौंहे सिकोड़ता है।)

पृथ्वीराज–(उसी स्वर में) मैंने कहा, कैद करने के बाद यह जुल्म? मनुष्यता में रहना सीखो खुदा के बंदों! जान से मार डालो, पर एक राजा की इज्जत रहने दो! चंद, उसने कहा, 'चुप रह'।

(गहरी साँस लेता है)

चंद–(तड़फकर) क्या कहा? 'चुप रह'?

पृथ्वीराज—हाँ यही कहा। दिल्ली और अजमेर को भौंह के संकेत से नचाने वाले चौहान को ये शब्द भी सुनने पड़े। यदि दिल्ली में यह शब्द मेरे कानों में पड़ते तो........ तो...... हाय जबान लड़खड़ा रही है। बोला भी नहीं जाता।

चंद—(दुःख से) आह, आज महाराज पृथ्वीराज चौहान की यह दशा?

पृथ्वीराज—(अपने ही विचारों में) फिर.... फिर सबने मिलकर मुझे पकड़ लिया। मेरे हाथ पाँव बँधे थे। मैं बिल्कुल असहाय था। चंद, उस समय जीवन में पहली बार, केवल पहली बार मैंने अपनी आँखों को आँसुओं से भरा पाया!

चंद—(करुणा से) महाराज आपका गला सूख रहा है। पानी पी लीजिये।

पृथ्वीराज—(चंद की बातें न सुनकर अपने ही विचारों में, मानों वह दृश्य उनकी आँखों में झूल रहा था) दो गरम सूजे मेरी आँखों के पास लाये गये। मुझे उनकी गरमी धीरे—धीरे पास आती हुई जान पड़ी। उस समय मुझे याद आया संयोगिता ने एकबार इसी प्रकार धीरे—धीरे अपने मुख को समीप लाते हुए इन्हीं आँखों का चुंबन किया था। उस समय उन अधरों की मादकता मेरे पास इसी प्रकार धीरे—धीरे आती हुई जान पड़ी थी।

चंद—(अधीर होकर) अब आगे मत कहिए, मैं नहीं सुन सकूँगा.....

पृथ्वीराज—एक क्षण में उन्होंने उन गरम सूजों से मेरी पलकों को छेद डाला और मेरी पुतलियों को जलाकर........

चंद—(अधीर होकर) आगे न सुन सकूँगा! यह क्रूरतापूर्ण अत्याचार.....

पृथ्वीराज—(शांत होकर) अच्छा, मत सुनो। पर इतना जान लो कि जिन आँखों में संयोगिता की मूर्ति अंकित थी, वे आँखें अब नहीं रहीं। जिन संतृप्त आँखों में सौन्दर्य—सुधा पान की मादकता थी, वे आँखे अब नहीं रहीं।

चंद—(दृढ़ता से) और जिन आँखों ने क्रूर राजाओं को निस्तेज कर दिया, जिन आँखों ने रक्त—वर्ण होकर रणक्षेत्र में लोहा बरसा दिया, वे आँखें?

पृथ्वीराज—वे आँखें? उफ, वे आँखें तो जयचंद के विश्वासघात की आग में जल गई। कवि, क्या रेवा तट के सताईसवें समय की याद दिलाना चाहते हो? इस समय मेरे सामने तुम्हारा 'रासो' कवि की कल्पना का साधारण अभ्यास मात्र है। अब तो यह शरीर पृथ्वीराज चौहान नहीं रह गया।

चंद—महाराज............. ।

पृथ्वीराज—(क्रोध से) बार—बार मुझे महाराज क्यों कह रहे हो? मैं एक कैदी हूँ। (साँकल बज उठती है)

चंद—पर, मेरे लिए नहीं। फिर आपका शरीर कैदी है, आत्मा? मुझे विश्वास है, आपकी आत्मा कैदी नहीं हो सकती। आप वही पृथ्वीराज चौहान हैं। उस समय भारत में थे, इस समय यहाँ। शेर पिंजड़े में बंद रहने पर भी शेर ही कहलाता है।

(गर्व की मुद्रा)

पृथ्वीराज–यदि शेर को शेर ही रखना चाहते हो, तो चंद कहाँ है तुम्हारी तलवार? फाड़ दो मेरा यह वक्षस्थल। पृथ्वीराज के गौरव से गिरे हुए इस प्राणी को अब प्राण की आवश्यकता नहीं। इस जीवन का एक–एक क्षण तुम्हारी तलवार की धार से बहुत पैना है। (साँकल का शब्द) लाओ, अपनी तलवार।

चंद–तलवार? वह तो मुहम्मद गोरी के हुक्म से दरवाजे पर ही मेरे हाथों से ले ली गई, मुझसे कहा गया कि मैं उसे भीतर नहीं ले जा सकता। वह तो दरवाजे पर ही ले ली गई।

पृथ्वीराज–(दाँत पीसकर) ले ली गई? और हाथ? वे भी गोरी ने वहीं काट लिए। नीच! नरकी! (ठहरकर) चन्द तुम प्राणहीन होकर मेरे पास आये हो। जानते हो, वीरों के प्राण का नाम है तलवार!

चंद–जानता हूँ पर सुल्तान का हुक्म।

पृथ्वीराज–सुल्तान का हुक्म? गोरी का? और तुम उस हुक्म के आज्ञाकारी सेवक हो?

चंद–(सँभलकर) किन्तु–किन्तु यह कटार (छिपी हुई कटार निकालकर) मैंने आत्मा की तरह छाती में छिपाकर रखी, मैं इससे अपना काम कर सकता हूँ। (तनकर खड़ा हो जाता है।)

पृथ्वीराज–(बड़ी प्रसन्नता से) मेरे अच्छे चंद, महाकवि मित्र, प्यारे, मेरे जीवन की शमशान के समान भयानक आग शांत कर दो, लाओ, तुम्हारा माथा चूमूँ। हाय, मैं देख भी नहीं सकता, तुम्हारा माथा कहाँ है?

चंद–महाराज। विचलित न होइए। मैं चौहान को इस दैन्यावस्था में नहीं देख सकता? मैं अभी मृत्यु..........

पृथ्वीराज–(बात काटकर) हाँ, देर न करो। देर न करो। मेरे चंद महाकवि मित्र ....

चंद–महाराज, मैं देर न करूँगा। यह छुरी छाती में घुसकर शीघ्र ही इस दुःख से मुक्त कर देगी। लीजिए चूमता हूँ यह कटार। (कटार चूमता है) लाइए, अंतिम बार आपके चरण स्पर्श कर लूँ। (चरण स्पर्श करता है।) प्रणाम। मैं आप पर नहीं, अपने शरीर पर आघात करूँगा, क्योंकि मैं आपकी यह दशा नहीं देख सकता। (कटार, ऊपर तानता है।)

पृथ्वीराज–(विचलित होकर) नहीं नहीं।

(जंजीर बज उठती है।) मेरे चंद, यह नहीं हो.......

(चंद आत्मघात करना ही चाहता है कि पीछे से मुहम्मद गोरी निकल कर, हाथ रोककर, कटार छीन लेता है। गोरी पैंतीस वर्ष का युवक है। शरीर गठा हुआ। मूँछे तनी हुई। वह फौजी वेश में है। कमर में तलवार है।

गोरी–(हँसकर) हंअ, सरदार, जिन्दगी इतनी नाचीज है? यह दुनिया इसी तरह चलती है, और चलती रहेगी। तुम इतने मायूस क्यों होते हो? भोले सरदार? क्या तुम जानते हो कि मेरे घर में क्या हो रहा है इसका मुझे पता नहीं? गोर का सुल्तान दीवारों में अपनी दृष्टि रखता है।

(चंद मलिन दृष्टि से गोरी को देखता है।)

गोरी–(उत्साह से) पर वाह? तुम कितने वफादार हो? अपने मालिक की यह हालत न देख सके सरदार? अपनी वफादारी का इनाम माँगो। (चंद चुप रहता है।)

गोरी–कुछ नहीं? बोलो? अभी तो बोल रहे थे। अंधे का पैर चूम रहे थे उसकी आँखे नहीं चूमते? अहा, कैसी खूबसूरत हैं।

(व्यंग्य दृष्टि)

चंद–खूबसूरत? उस शेर की आँखें अब उसके दिल में है।

गोरी–दिल में? बहुत अच्छा। यह शेर शायद तुम्हें उन्हीं आँखों से देख रहा है। पृथ्वीराज तू मुझे किन आँखों से देख रहा है।

पृथ्वीराज–(स्थिर भाव से) गोरी तू देखने लायक भी नहीं है। अपनी अंधी आँखों से अगर मैं देख सकता, तो भी मैं तुझे देखना पसंद न करता। अच्छा हुआ तूने इनका उजाला ले लिया (ठहरकर) मैं तुझे क्या देखूँ। तू भूल गया, उस बार मेरे तीरों से तेरी टोपी उड़ी थी। उस वक्त तुझे पूरी नजर से देखा था। तू भूल गया? मुझे दुःख है, सरदारों के कहने में आकर मैंने तेरा पीछा नहीं किया। मेरे तीर तेरे शरीर को बेध सकें......... (निराशा)

गोरी–(लापरवाही से) खैर, तेरे तीर न सही, मेरे मामूली सूजे तेरी आँखो को बेध सके। एक ही बात है पर तेरे तीर..........

चंद–(बीच ही में) सुलतान, पृथ्वीराज के तीर–पृथ्वीराज आवाज पर तीर मारता है।

गोरी–(आश्चर्य से) आवाज पर। मारता होगा, पर अब तो अन्धा है।

चंद–सुलतान, आवाज पर तीर मारने के लिए आँख की जरूरत नहीं होती।

गोरी–सच? (आश्चर्य प्रकट करता है)

चंद–बिल्कुल सच। कल अपने अन्धे वीर का यह तमाशा देखियेगा। यही मेरा इनाम समझें।

गोरी–(पृथ्वीराज की ओर देखकर) शाबाश कैदी, (चंद से) अच्छा चंद! कल तुम्हारे खातिर इस अंधे की तीरंदाजी भी देख लूँगा। अच्छा अब देर हो रही है। तुम मेरे साथ चल सकते हो? खुदकुशी पर तुम से एक कहानी कहनी है। कैदी से मिलने का वक्त अब पूरा हो गया अब एक क्षण भी नहीं।

चंद–यह बतलाना तो सिपाही का काम है, आपका नहीं, आप तो सुलतान हैं।

गोरी–तुम हमेशा मुझे सुलतान के बजाय सिपाही समझो, सिर्फ सिपाही।

(दृढ़ता से खड़ा होता है)

चंद–(पृथ्वीराज से) अच्छा, तो अब चलता हूँ। प्रणाम! महाराज पृथ्वीराज। (प्रणाम करता है।)

गोरी–(व्यंग्य से) महाराज (महा पर जोर देकर) पृथ्वीराज। हा–हा–हा (अट्टहास करता है)

चंद–(जोर से) अख्तर?

(अख्तर सिपाही का प्रवेश। पूरी वर्दी में। तीस वर्ष का जवान ज्ञात होता है। मुस्तैदी से प्रवेश। आकर सलाम करता है।)

गोरी–महाराज (महा पर जोर देकर) पृथ्वीराज की आँखों में आज रात को नींबू और मिर्च पड़ेगा। रात के ग्यारह बजे। कितने बजे?

उत्तर–ग्यारह बजे।

गोरी–क्या?

अख्तर–नींबू और मिर्च।

गोरी–हाँ, नींबू और मिर्च। समझे।

पृथ्वीराज–(दृढ़ता से उसी स्वर में) नींबू के रस में नमक मिलाना होगा समझे।

गोरी–(मुस्कुराकर सिपाही से) इसकी मुराद पूरी करो। (पृथ्वीराज से) कैदी। कल सुबह मिलूँगा। रात को अपनी आँखों में नमक–मिर्च डाल कर आराम से सोना। (तनकर खड़ा होता है।)

पृथ्वीराज–बहुत अच्छा। गोरी मुझसे सलाम करके जाना। मैं बादशाह हूँ।

गोरी–(व्यंग्य से मुस्करा कर) बहुत अच्छा बादशाह। सलाम।

(चंद को साथ लेकर गोरी गर्व से प्रस्थान करता है। पृथ्वीराज स्थिर भाव से बैठा रहता है।)

अभ्यास के लिए प्रश्न

प्र. 1 पृथ्वीराज की प्रेयसी का नाम था –

(क) पद्मावती (ख) चन्द्रावती

(ग) संयोगिता (घ) संगीता

प्र.2 ''कवि घोषणा कर दो कि यह माता नहीं पिशाचिनी है।'' पृथ्वीराज के इस कथन से उसका कौनसा मनोभाव व्यक्त हुआ है –

(क) वेदना (ख) ग्लानि

(ग) घृणा (घ) क्रोध

प्र. 3 मुहम्मद गोरी पराजित सम्राट पृथ्वीराज को बंदी बनाकर कहाँ ले गया –

(क) कराची (ख) ईरान

(ग) गोर (घ) कंधार

प्र. 4 'चंद तुम प्राणहीन होकर मेरे पास आए हो' पृथ्वीराज ने कहा क्योंकि चन्द..........–

(क) निराश मन होकर आया था (ख) सुलतान से छिपकर आया था

(ग) बहुत उदास होकर आया था (घ) तलवार विहीन होकर आया था

प्र. 5 पृथ्वीराज चौहान कहाँ का सम्राट था?

प्र. 6 पृथ्वीराज चौहान के युद्ध में हारने का मुख्य कारण क्या था?

प्र. 7 चंद बरदाई कौन था?

प्र. 8 मुहम्मद गोरी ने बंदी पृथ्वीराज के साथ कैसा व्यवहार किया?

प्र. 9 'शेर पिंजड़े में बन्द रहने पर भी शेर ही कहलाता है।' ये शब्द किसने, किससे और कब कहे थे?

प्र. 10 ''मेरे अच्छे चन्द, महाकवि मित्र, प्यारे, मेरे जीवन की शमशान के समान भयानक आग शांत कर दो।'' 'पृथ्वीराज के जीवन की शमशान के समान भयानक आग कौनसी थी?

प्र. 11 ''कुछ नहीं? बोलो? अभी तो बोल रहे थे। अंधे के पैर चूम रहे थे, उसकी आँखे नहीं चूमते? अहा कैसी खूबसूरत आँखें हैं।'' पंक्तियों में गोरी का कौनसा भाव व्यक्त हुआ है?

प्र. 12 चंद बरदाई कृत पृथ्वीराज चौहान को लेकर लिखे महाकाव्य का नाम लिखिए।

प्र. 13 चंद बरदाई बंदीगृह में पृथ्वीराज से मिलने के लिए अपनी तलवार क्यों नहीं ले जा सका ?

प्र. 14 पृथ्वीराज किस विद्या में सिद्धहस्त था ?

प्र. 15 चंद कटार निकाल आत्महत्या करना चाहता है। चंद के द्वारा ऐसा चाहने का कारण स्पष्ट कीजिए।

प्र. 16 गोरी ने पृथ्वीराज को बंदीगृह में किस–किस प्रकार की यातनाएँ दीं? लिखिए।

प्र. 17 गोरी की कैद में बंदी पृथ्वीराज चौहान की मनःस्थिति का वर्णन कीजिए।

प्र. 18 गोरी आत्महत्या के लिए उद्यत चंद के हाथों से कटार छीन लेता है तथा चंद से जो कुछ कहता है। उन विचारों को अपने शब्दों में लिखिए।

प्र. 19 ''मैंने कहा....... मनुष्य जैसे रहना सीखो, खुदा के बंदो। जान से मार डालो, पर एक राजा की इज्जत रहने दो।'' ये शब्द किसने, किसको और क्यों कहे थे?

प्र. 20 ''उस निर्दय क्षण की बात मत पूछो। बड़ी कठिनाई से उस कष्ट को भुला सका हूँ।'' वह कौन सा कष्ट था जिसे पृथ्वीराज नहीं भुला पा रहा था?

प्र. 21 चंद यदि कटार लेकर आत्महत्या कर लेता तो एकांकीकार को कथा में क्या मोड़ देना पड़ता? अपनी कल्पनाशक्ति से लिखिए।

प्र. 22 चन्द गोरी को अपने ''अन्धे वीर'' का कौनसा तमाशा दिखाना चाहता था और क्यों?

प्र. 23 ''दिल्ली और अजमेर को भौंह के संकेत से नचाने वाले चौहान को ये शब्द भी सुनने पड़े।'' ऐसे कौनसे, किसके शब्द सुनने पड़े?

प्र. 24 गोरी की कैद में बंदी पृथ्वीराज की दशा का वर्णन कीजिए।

प्र. 25 'पृथ्वीराज की आँखे' एकांकी लिखने के पीछे निहित एकांकीकार के उद्देश्य को सविस्तार लिखिए।

प्र. 26 पृथ्वीराज चौहान एवं मुहम्मद गोरी की चारित्रिक विशेषताओं को लिखते हुये दोनों के चरित्र की तुलना कीजिए।

प्र. 27 मुहम्मद गोरी के स्थान पर यदि पृथ्वीराज ने गोरी को कैद कर लिया होता तो पृथ्वीराज गोरी के साथ कैसा व्यवहार करता? अपने उत्तर की पुष्टि कल्पना एवं तर्क से कीजिए।

प्र. 28 मुहम्मद गोरी ने पृथ्वीराज के साथ जो क्रूर व्यवहार किया, क्या वह उचित था? इतिहास सम्मत किसी ऐसी घटना का उल्लेख कीजिए, जिसमें विजेता ने किसी वीर राजा के बंदी हो जाने पर भी उसके साथ इसके विपरीत व्यवहार किया हो।

पाठ के आसपास

विद्यालय में इस एकांकी का अभिनय कीजिए।

कठिन शब्दार्थ

प्रौढ़– तीस से पचास वर्ष की आयु का व्यक्ति / आखेट– शिकार / व्याघ्र– शेर
/ सूजे – शलाखें / पिशाचिनी– राक्षसी / प्रेयसी– प्रेमिका
/ निस्तेज– बिना तेज के/मुरझाया हुआ / रक्तवर्ण– लालरंग
/ दैन्यावस्था– दयनीय अवस्था / नाचीज– मामूली / मायूस– दुःखी
/ अट्टहास– हँसना / मुस्तैदी– जल्दी से / प्रस्थान– जाना / हुक्म– आदेश
/ थर्राना– काँपना / साँकल– लोहे की जंजीर / मुराद– इच्छा
/ वफादारी– ईमानदारी / जबान– जिह्वा आवाज / जुल्म– अत्याचार

अध्याय–7

मुक्ति योद्धाओं के शिविर में

–विष्णुकांत शास्त्री

हम लोगों की पिकअप की हेड लाइट की भरपूर रोशनी में तनी हुई संगीन चमक उठी। झटका खाकर जीप रुक गई। कैप्टेन रशीद खड़े हुए, उनको देखते ही संतरी ने सलाम ठोंका। दरवाजा खुला और हम लोगों ने मुक्ति योद्धाओं के शिविर में प्रवेश किया।

कलकत्ते से 200 मील दूर उत्तर बांग्लादेश के किसी अंचल में अवस्थित उस शिविर के जवानों से मिलने के लिए एक जीप तथा दो मोटरों में हम लोग 16 मई को सुबह साढ़े नौ बजे कलकत्ते से रवाना हुए थे, हम लोग यानी कलकत्ता विश्वविद्यालय बांग्लादेश सहायक समिति के मंत्री प्रो. दिलीप चक्रवर्ती, मैं, विश्वभारती के तीन प्राध्यापक, दो अध्यापिकाएँ, दो समाज सेविकाएँ और बांग्लादेश मिशन के एक विशिष्ट प्रतिनिधि। अपने देश की जनता की आंतरिक सहानुभूति के प्रतीक के रूप में हम लोग काफी असामरिक सामग्री उन्हें भेंट देने के लिए ले गये थे। जेठ की तपती दुपहरी और लंबी यात्रा ने तन को थका तो दिया था किन्तु मन उत्साह से भरा था जब हम लोग कुछ अनिवार्य कारणों से रुक–रुककर सांझ के समय सीमा पर पहुँचे। सीमावर्ती भारतीय अधिकारियों के स्नेह, सौजन्य एवं सहयोग को तो हमने स्वीकारा किंतु चाय–शाय के चक्कर में नहीं पड़े। मार्गदर्शक मिलते ही हम लोग आगे बढ़े।

साढ़े सात के करीब हम लोग बांग्लादेश की मुक्ति फौज के स्थानीय अधिकारी कैप्टेन रशीद के छोटे से प्रशासनिक शिविर में पहुँचे। कैप्टेन ने प्रेम से हम लोगों का स्वागत किया। पहले वे पाकिस्तान की रेगुलर आर्मी में थे। फिर पूर्वी बंगाल के किसी सैन्य प्रशिक्षण केंद्र में थे। उत्तरदायित्व का बोध और संघर्ष का संकल्प उनके चेहरे पर स्पष्टतः अंकित था। पाकिस्तानी फौज से हुई कई मुठभेड़ों का नेतृत्व वे कर चुके थे। आधुनिकतम शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित पाकिस्तानी सैन्यबल के सम्मुख उनकी टुकड़ी टिक नहीं पाई, किन्तु दुश्मन को उन्होंने करारी चोटें पहुँचाई थीं। उनकी कर्मठता और योग्यता का सबसे बड़ा प्रमाण यही था कि अत्यंत प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उन्होंने अपनी टुकड़ी को बिखर जाने से बचाया था और एक लंबे युद्ध की आवश्यकताओं के अनुसार अब नये सिरे से उनका पुनर्गठन कर रहे थे। लड़ाई की कठोरता ने उनके चेहरे को सख्त बना दिया था किंतु अब भी वे हँस सकते थे।

मुझे सबसे ज्यादा हैरानी यह देखकर हुई कि तीस–पैंतीस मिनट की बातचीत में उन्होंने कोई शिकायत नहीं की, न भाग्य की, न नेतृत्व की, न सामग्री के अभाव की। जो नहीं हो सका, वह क्यों नहीं हो सका? इसके बारे में हवाई तर्क करने और दूसरों को दोष देने की सामान्य मानवीय दुर्बलता उनमें नहीं दिखी। राजनीतिक चर्चा में भी उन्होंने कोई रुचि नहीं दिखाई। हमारे एक साथी ने जब बांग्लादेश की विभिन्न राजनीतिक पार्टियों में व्याप्त मतभेदों की चर्चा करते हुए कुछ की आलोचना शुरु की तो उन्होंने उस प्रसंग को बंद करते हुए कहा, ''मैं सिपाही आदमी हूँ। इतना जानता हूँ कि पाकिस्तानियों ने तेईस सालों तक लगातार मेरे देश का शोषण किया है, हमें गुलाम बनाकर रखा है। इस लड़ाई में उन्होंने जिस विश्वासघातकता तथा पशुता का परिचय दिया है, उससे यह साफ है कि वे हमारे देश को अपने कब्जे में रखने के लिए नीचता की किसी भी सीमा तक जा सकते हैं। इसका एक ही जवाब है, जीतने तक युद्ध करते जाना। इन परिस्थितियों में लड़ाई कैसे चल सकती है? कैसे सफल हो सकती है? मेरी समस्या यही है। राजनीतिक दांवपेच मैं नहीं जानता। उसके लिए आप इनसे बातचीत कीजिए।'' इस दो–टूक उत्तर ने मुझे जीत लिया। बंगाली अल्पभाषी भी हो सकता है और राजनीति–चर्चा–विरत भी, यह मेरे लिए नयी अभिज्ञता थी। इस युद्ध से, बल्कि शेख मुजीब के पूरे आन्दोलन से पूर्व बंगाल के लोगों में नयी चेतना का उदय हुआ है, इसमें कोई संदेह नहीं।

हम लोग इधर बातचीत कर रहे थे, उधर वीणा दी, मीना जी सूची से मिला–मिलाकर सब सामग्री क्वाटर्स मास्टर को संभला रही थीं। बातचीत के मध्य हमें पता चला कि जहाँ हम थे, उसके इर्द–गिर्द ही दो शिविर और थे, एक नये रंगरूटों का, दूसरे पुराने ई.पी.आर. के उन जवानों का, जो लड़ाई में हिस्सा ले चुके थे और उनकी संख्या पचास के करीब थी। उन्हें सैनिक शिक्षा दी जा रही थी। पुराने जवानों की संख्या 250 के करीब थी और अब उन्हें विशेष रूप से गुरिल्ला युद्ध के लिए प्रशिक्षित किया जा रहा था। स्वभावतः हम लोगों ने उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की। कैप्टेन मुस्काराए बोले, ''अच्छा आप लोग इतनी दूर से चले आ रहे हैं, थोड़ा सुस्ता लीजिए और नाश्ता कर लीजिए, फिर मैं आप लोगों को ले चलूँगा।'' नाश्ते पर हम लोगों ने आपत्ति की, पर कैप्टन नहीं माने, बोले, ''आप लोग हमारे मेहमान हैं, हम लोगों के लिए इतनी चीजें लाए हैं, यह कैसे हो सकता है कि हम लोग आप लोगों की खातिर न करें ?''

जवानों का शिविर उस स्थान के करीब डेढ़–दो मील दूर था। रास्ता कच्चा और खराब था, अतः हम लोगों की दोनों गाड़ियाँ वहीं रही। मुक्ति–फौज की बड़ी पिकअप जीप आगे–आगे और अपनी जीप पीछे–पीछे चली। मैं कैप्टेन के साथ अगली जीप में था। कैप्टेन के साथ स्टेनगन लिए उनका अंगरक्षक भी था।

चाँद अभी तक नहीं निकला था। घोर निस्तब्धता और घने अंधेरे के बीच उस ऊबड़–खाबड़ रास्ते पर दौड़ रही थीं दो जीपें, जिनकी हेड–लाइट अंधेरे को चीरकर प्रकाश के झरने के समान झर रही थीं। ऊपर तारों भरा निर्मल आकाश था। कलकत्ते के धूल और धुँए से भरे आकाश में इतने तारे कहाँ से दिखते हैं और यह हवा – यह उन्मुक्त प्राकृतिक विस्तार। सामने से कोई जंतु दौड़ गया। ब्रेक के झटके ने विचारधारा को भी झकझोर दिया। लगा ऐसा ही अंधेरा बांग्लादेश के ऊपर भी छा गया है, क्या वह दूर होगा? और तभी मेरे मन में कौंध गई नसीमुन आरा की पंक्तियाँ ''ए आंधार कूलप्लावी कत क्षण दूबे, तिमिर हननेर आमर कंठे.......'' मतलब किनारों को डुबो देने वाला अंधेरा टिक सकेगा कितनी देर,

अंधेरे को चीर देने वाला गान मेरे कंठ में.......... कैप्टेन रशीद और उनके साथी अंधेरे को चीर देने की साधना में ही तो लगे हैं। तभी संतरी की आवाज सुनकर मैं भावजगत से फिर वस्तुजगत में आ गया।

एक बड़ा–सा मैदान, जिसके बीचोंबीच विशाल बरगद का पेड़, दो तरफ फौजी छावनी। हम लोगों की जीपें अहाते में घुसीं तो जवान बाहर निकल आए। बांग्लादेश मिशन के जो प्रतिनिधि हम लोगों के साथ आए थे, वे जवानों को संबोधित कर कुछ कहने वाले थे अतः कैप्टेन ने उन्हें करीने से व्यवस्थित कर बैठा दिया। रास्ते के पड़ावों में हम लोग रवीन्द्रनाथ के देशभक्ति–मूलक गीत–गाते और कविताएँ सुनते–सुनाते आये थे। अब स्वाभाविक था कि हम लोगों से जवानों को गीत, कविता आदि सुनाने का अनुरोध किया जाता। हम लोगों ने प्रसन्नतापूर्वक इसे स्वीकार कर लिया।

चारों तरफ के अंधेरे से जूझती हुई चार लालटेनें, इधर–उधर के संतरियों की बीच–बीच में चमक उठने वाली टार्चें, बरगद के पेड़ के नीचे दो मेजें, कुछ कुर्सियाँ, सामने व्यूहबद्ध ढाई सौ मुक्तियोद्धा। कुल मिलाकर रहस्यपूर्ण रोमांचक वातावरण। सेकेंड इन कमांड ले. टून्नूमियां उस फौजी–सांस्कृतिक कार्यक्रम का संचालन कर रहे थे। उन्होंने घोषणा की सबसे पहले बांग्लादेश का राष्ट्रगीत गाया जाएगा। पार्थ, वीणा दी, मीना जी तथा अन्यों के परिशीलित सुरीले शांतिनिकेतन स्वर गूँजे, ''आमार सौनार बांगला, आमी तोमार भालोवासी।'' जवानों के साथ–साथ हम बस 'सावधान' की मुद्रा में खड़े हो गये। ओ मेरे सोने के बंगाल, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। देश को कैसे प्यार किया जाता है? क्या देशप्रेम केवल जबानी जमा–खर्च है? नहीं, नहीं, देश की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए अपना जीवन, अपना सब कुछ बलिवेदी पर चढ़ाने के लिए जो तत्पर न हो, उसे क्या हक है यह कहने का कि 'ओ मेरे देश, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।' मेरे सामने जो लोग खड़े थे उन्होंने अपना सब कुछ होम दिया था और अब प्राणों को हथेली पर लिए दुश्मन से जूझने को, उसे मार भगाने को कटिबद्ध थे। हाँ, उन्हें हक है कि वे यह कहें, 'आमार सोनार बांगला, आमी तोमार भालोवासी।'

फिर मेरा नाम पुकारा गया, परिचय देने के बाद मुझसे कहा गया कि मैं बांग्लादेश की नयी संग्रामी कविताएँ सुनाऊँ। कविताएँ सुनाना मेरा नशा है मुझसे कहा गया किन्तु उतनी तन्मयता से मैंने शायद ही कभी कविताएँ सुनाई हों। पहले सुनाई सिकंदर अबू जफर की कविता 'आमादेर संग्राम जलवेइ'। 'अंधेरी कब्रगाह में उषा के बीज' बोने वालों का दृढ़ संकल्प व्यंजित हुआ है उस कविता में। मैंने उसका अनुवाद भी किया है, उसकी आरंभिक पंक्तियाँ हैं–

दी तो है शांति, देंगे स्वस्ति भी

दे चुके संभ्रम, देंगे अब अस्थि भी

प्रयोजन हुआ तो देंगे नदी भर रक्त

हो लें पथ बाधा के पत्थर और सख्त

अविराम यात्रा के लिए चिर संघर्ष से

एक दिन पहाड़ बह चलेगा ही

चलेगा ही, चलेगा ही, संग्राम यह चलेगा ही।

कविता शेष हो गई लेकिन मुझे लगा कि श्रोताओं की प्यास बुझी नहीं है। मैंने दूसरी कविता सुनाई नसीमुन आरा की 'तिमिर हननेर गान आमार कंठे, आमार हाते इ चाबी आवसी दिनेर' किसी बड़े उद्देश्य को जब कोई कवि अपनी संपूर्ण भावात्मक सत्ता द्वारा स्वीकार कर लेता है, तो उसका स्वर कितना उदात्त हो जाता है। सिकंदर और नसीमुन दोनों अभी छात्र ही हैं, किन्तु ये कविताएँ कितनी वजनदार हैं, कितनी धारदार हैं। मेरा काव्य–पाठ ज्यों ही समाप्त हुआ, स्वतः स्फूर्त तालियों की गड़गड़ाहट से परिवेश गूँज उठा। मुझे खुशी हुई कि जवानों ने इन कविताओं को पसंद किया।

बांग्लादेश मिशन के प्रतिनिधि ने अपने संक्षिप्त किन्तु तेजस्वी भाषण में कहा कि लड़ाई चालू है और आखिरी जीत तक चालू रहेगी। जीत हमारी होगी ही क्योंकि हमारी सारी जनता इस शोषण और गुलामी का केवल सीमावर्ती अंचलों में ही नहीं, बांग्लादेश की समस्त भूमि पर विरोध करती है। हमारी लड़ाई किस जोशखरोश के साथ चालू हो जाती है, उसके विषय में अभी मैं और क्या कहूँ ?

अपने शिविर पहुँचकर कैप्टेन ने फिर एक बात पर हम लोगों को धन्यवाद दिया। मैं अपने साथ धर्मयुग के बांग्लादेश विशेषांक की एक प्रति ले गया था जो मैंने उन्हें भेंट की और चाहा कि यदि कोई मुद्रित या लिखित साहित्य उनके पास हो तो मुझे दें। वे बोले कि हम लोग अभावों के बीच जी रहे हैं, न हमारे पास यथेष्ट शस्त्रास्त्र हैं, न दवाइयाँ, न पैसा ही। इसलिए हम अभी तक अपना साहित्य मुद्रित, प्रकाशित नहीं कर पाए हैं। हम जानते हैं कि इसकी बहुत जरूरत है, हम इसकी योजना भी बना रहे हैं, पर अभी तो मैं आपको एक छोटे से पर्चे के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे सकूँगा। यह पर्चा हमने बड़ी संख्या में बांग्लादेश की सामान्य जनता में बाँटा है। मैंने आग्रहपूर्वक उस पर्चे की मांग की। वे भीतर गये, दो कागज लिए हुए बाहर आए और मुझे देते हुए बोले, ''लीजिए यह तो वह छपा हुआ पर्चा है और यह है हम लोगों के दैनिक प्रशिक्षण का कार्यक्रम। इससे आप समझ सकेंगे कि हम लोग दिन के समय क्या करते हैं। रात की कार्रवाई का कुछ संकेत तो मैं आपको दे ही रहा हूँ।''

विदा का क्षण आया। दोनों हाथों से कैप्टेन का दाहिना हाथ दबाते हुए मैंने कहा, ''भगवान ने चाहा तो हम लोग फिर मिलेंगे, यहाँ भी और ढाका में भी।'' मृत्यु की भर्त्सना दिन–रात हम ढोते हैं' के अंदाज में वे मुस्कुराए और बोले, 'जय बांगला'। हम सबने दुहराया, 'जय बांगला'।

मेरे सामने उनके दिए हुए दोनों कागज पड़े हैं। सुबह साढ़े पाँच से रात के दस बजे तक का व्यस्त सैनिक कार्यक्रम। गुरिल्ला योद्धाओं को विस्फोटकों, मोर्टरों, मशीनगनों, हथगोलों आदि का प्रयोग तो सिखाया ही जाता है, सामाजिक एवं राजनीतिक नेतृत्व की उनकी क्षमता के विकास पर भी पूरा जोर दिया जाता है। ध्वंस और निर्माण दोनों साथ–साथ ही तो चलते हैं।

दूसरा कागज अपने देश की जनता के प्रति किया गया मुक्तियोद्धाओं का निवेदन है, जिसमें उन्होंने अपने स्वरूप और लक्ष्य को स्पष्ट किया है। इसका प्रकाशन तब हुआ था जब बांग्लादेश में मुख्य नगरों और यातायात के साधनों पर उनका अधिकार था। आज स्थिति बदल गई है, फिर भी उनका मौलिक स्वरूप और लक्ष्य नहीं बदला है। अतः उनके बलिदानी प्रयास की सफलता की कामना करते हुए मैं यह उचित समझता हूँ कि उनकी बात का मुख्य अंश उनके शब्दों में आप तक पहुँचा दूँ –

''हम स्वाधीनता और गणतंत्र के विश्वासी हैं। मनुष्य की तरह जीना चाहते हैं। इसलिए हम संग्राम कर रहे हैं। हम बांग्लादेश में जुल्मबाजी नहीं चाहते। हम संत्रासपूर्ण शासन से मुक्ति चाहते हैं,

इसलिए हम संग्राम कर रहे हैं। जिस दिन तक हम साढ़े सात करोड़ बंगाली स्वाधीन बांग्लादेश के नागरिक नहीं बन जाते, उस दिन तक यह संग्राम शेष नहीं होगा। शांति और गणतंत्र के शत्रु हमारी स्वाधीनता की आकुलता को कुचल देना चाहते हैं किन्तु वे पूर्णतः पराजित होंगे ही (हम लोगों की जय सुनिश्चित है)

मुक्तियोद्धा आप लोगों के समर्थन की कामना करते हैं। प्रत्यक्ष संग्राम में योग देना यदि आपके लिए संभव न हो, तो भी दूसरी तरह से सहायता करने के लिए बहुत से रास्ते खुले हैं। ... शांति, स्थिर रहें, मन मजबूत रखें। स्वाधीनता हम लोगों का जन्मगत अधिकार है। हम लोगों की जय होगी ही। जय बांग्ला।''

अभ्यास के लिए प्रश्न

प्र. 1 फौजी सांस्कृतिक कार्यक्रम का संचालन कौन कर रहा था –

(क) डॉ. टुन्नुमिया (ख) ले. करीम

(ग) ले. अल्लामिया (घ) केप्टन मोहम्मद मिया ( )

प्र. 2 लेखक ने जो दूसरी कविता सुनाई, वह किसके द्वारा रचित थी –

(क) सिकंदर अबूजफर (ख) नसीमुन आरा

(ग) तसलीमा (घ) हैदर अली ( )

प्र. 3 सिकंदर और नसीमुन क्या थे –

(क) शिक्षक (ख) विद्यार्थी

(ग) व्यापारी (घ) मजदूर ( )

प्र. 4 बांग्लादेश की मुक्तिफौज के स्थानीय अधिकारी कैप्टन का क्या नाम था ?

प्र. 5 लेखक के अनुसार कैप्टन के चेहरे पर स्पष्टतः क्या अंकित था ?

प्र. 6 पूर्वी बंगाल के लोगों में नयी चेतना का उदय किस कारण हुआ ? समझाइए।

प्र. 7 कैप्टन किस साधना में लगे थे ?

प्र. 8 पुराने जवानों को किस युद्ध के लिए प्रशिक्षित किया जा रहा था ?

प्र. 9 बांग्लादेशी किस देश से तथा क्यों युद्ध कर रहे थे ? बताइए।

प्र. 10 कलकत्ता से बांग्लादेश के शिविर में जवानों से मिलने के लिए कौन–कौन रवाना हुए ?

प्र. 11 कैप्टन ने राजनीतिक चर्चा बंद करते हुए क्या कहा ?

प्र. 12 शिविरार्थियों द्वारा लेखक से क्या अनुरोध किया गया और लेखक ने उसे कैसे पूर्ण किया?

प्र. 13 आमार सोनार बांग्ला गीत का भावार्थ स्पष्ट कीजिए।

प्र. 14 लेखक द्वारा सुनाई गई सिकंदर अबूजफर की कविता का भावार्थ स्पष्ट कीजिए।

प्र. 15 कैप्टन ने लेखक को जो दो पत्र दिए, उनमें क्या लिखा हुआ था ? समझाइए।

पाठ के आसपास

अपने शिक्षक के निर्देशन में भारतीय स्वाधीनता संग्राम पर समूह चर्चा कीजिए।

कठिन शब्दार्थ

मुक्ति–योद्धा – बांग्लादेश के स्वतन्त्रता सेनानी / साँझ – शाम का समय

/ रेगुलर – नियमित / दाँवपेच – कार्य सिद्ध हेतु विभिन्न उपाय

/ दो टूक उत्तर देना– सीधा उत्तर देना / अल्पभाषी– कम बोलने वाला

/ अभिज्ञता– जानकारी / गुरिल्ला युद्ध– छिप कर युद्ध करने की पद्धति

/ खातिर करना– आवभगत करना / निस्तब्धता– शांति

/ निर्मल– स्वच्छ / भावजगत– कल्पना लोक

/ वस्तुजगत– यथार्थ लोक / व्यंजित होना– प्रकट होना

/ तेजस्वी– तेजयुक्त, प्रतापी, कांतिमान / यथेष्ट– पर्याप्त / संत्रास– अत्याचार